संपादकीय

पुलिस विज्ञान त्रैमासिक पत्रिका का जुलाई-सितंबर , 2008 का अंक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। जैसा कि संपादक मंडल का यह प्रयास रहता है कि पत्रिका में पुलिस, न्यायालयिक विज्ञान व अन्य संबंधित विषयों की प्रामाणिक व प्रासंगिक जानकारी प्रदान की जाए। अतः अपराधों को सुलझाने में पुलिसकर्मियों द्वारा किस प्रकार की कार्य प्रणाली अपनाई जाए, अपराधों से निपटने तथा अपराध होने की संभावनाओं से संबंधित कुछ ओजस्वी विचार तथा प्रैस की भूमिका पर वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों तथा समाज के कुछ प्रबुद्ध वर्ग द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं जो आम पुलिस-कर्मी के साथ सभी वर्ग के लिए उपयोगी होते हैं।

इस अंक में इस बार पुलिस-कर्मियों के लिए **न्यायालयिक विज्ञान द्वारा दिशा निर्देश और संविधान की रक्षा, सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव और समाधान, पुलिस का विभिन्न वर्गों के साथ व्यवहार, अपराधियों के लिए सल्यूलर नेट (जाल), आदमियों की भगदड़ में कुचलती इन्सानी जिंदगियाँ, सुनवाई का अधिकार, महिला का प्रथम उत्पीड़न, विभिन्न राज्यों के मंत्रियों (जेल/गृह) प्रमुख सचिवों तथा महानिदेशकों/ महानिरीक्षकों (जेल) का सम्मेलन** से संबंधित लेख भी हैं। पत्रिका के सुधी पाठक पत्रिका को और अधिक सूचनाप्रद व उपयोगी बनाने में अपना सक्रिय सहयोग प्रदान कर सकते हैं। आशा है कि पत्रिका में सम्मिलित सभी लेख पाठकों को उपयोगी लगेंगे और वे अपने विचारों से संपादक मंडल को अवगत कराते रहेंगे। आपके विचारों का सहर्ष स्वागत है।

दिवाकर शर्मा

संपादक

वर्ष - 25 अंक 104 जुलाई-सितंबर, 2008

अनुक्रम

न्यायालयिक विज्ञान द्वारा दिशा निर्देश और संविधान की रक्षा 7
- *श्रीमती बृजवाला*

सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव और समाधान 13
- *के. के. कर्ण*

पुलिस का विभिन्न वर्गों के साथ व्यवहार 18
- *डा. आर. के. सक्सेना, डा. श्रीमती गीता सक्सेना*

अपराधियों के लिए सैल्यूलर नेट (जाल) 29
- *प्रवीण मण्डलोई*

आदमियों की भगदड़ में कुचलती इन्सानी जिंदगियां 33
- *डा. एस. के. कटारिया*

सुनवाई का अधिकार
- *डा. अम्बरीष कुमार श्रीवास्तव* 36

महिला का प्रथम उत्पीड़न 47
- *डा. जयश्री एस. भट्ट*

विभिन्न राज्यों के मंत्रियों (जेल/गृह) प्रमुख सचिवों तथा महानिदेशकों/महानिरीक्षकों (जेल) का सम्मेलन 58
- *निदेशक (अनु.एवं.वि.) की कलम से*

समीक्षा समिति के सदस्य

प्रो. एम. ज़ैड. खान, नई दिल्ली
प्रो. एस.पी.श्रीवास्तव, लखनऊ
श्री एस.वी.एम त्रिपाठी, लखनऊ
प्रो. बलराज चौहान, भोपाल
प्रो. अरुणा भारद्वाज, नई दिल्ली
प्रो. जे.डी. शर्मा, सागर, (म.प्र.)
प्रो. स्नेहलता टंडन, नई दिल्ली
डा. दीप्ति श्रीवास्तव, भोपाल
प्रो. वी.के. कपूर, जम्मू
डा. शैलेंद्र कुमार चतुर्वेदी, मेरठ
डा. अरविंद तिवारी, मुंबई
डा. उपनीत लल्ली, चंडीगढ़
श्री एस.पी. सिंह पुंडीर, लखनऊ
श्री पी. डी. वर्मा, छत्तीसगढ़
श्री वी.वी.सरदाना, फरीदाबाद
श्री सुनील कुमार गुप्ता, नई दिल्ली

'पुलिस विज्ञान' में प्रकाशित लेखों में लेखकों के विचार निजी हैं। इनसे पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली की सहमति आवश्यक नहीं।

अक्षरांकन एवं पृष्ठ सज्जा : रचना इंटरप्राइजिज, वी-8, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

न्यायालयिक विज्ञान द्वारा दिशा निर्देश और संविधान की रक्षा

श्रीमती बृजवाला

विवादित लेख परीक्षिका

ई-107, शास्त्री नगर, मेरठ, उ.प्र.-250005

अपराध एक चिरपरिचित शब्द है। समाज के अस्तित्व के साथ ही साथ इस शब्द का जन्म भी हो गया था। यद्यपि देश में विधि-सम्मत शासन द्वारा अब तक समाज के बड़े प्रयासों के द्वारा भी यह कभी भी पूर्णतया संसार से मिटाया नहीं जा सका है, परन्तु इसे कम तो किया जा सका है, अतएव समाज को व्यवस्थित तथा सुचारू रूप से चलाने के लिए देश में विधि-सम्मत शासन बनाया जाना अति आवश्यक है। भारत के संविधान के मौलिक अधिकार में सभी नागरिक समान है। साथ ही साथ संविधान की रक्षा करना भी सरकार का काम है। दैहिक स्वतंत्रता प्रत्येक व्यक्ति का मूल–अधिकार है। अतएव गलत गिरफ्तारी से व्यक्ति के इस मूल अधिकार का अति उल्लंघन होने के साथ ही साथ उसकी प्रतिष्ठा और सम्मान को भी बड़ा गहरा सदमा पहुंचता है। अतएव विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अतिरिक्त किसी भी व्यक्ति को प्राण एवं देह की स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता है। इसलिए किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध संज्ञेय अपराध की रिपोर्ट मिलने पर ही विवेचना के मध्य पुलिस को अभियुक्त को गिरफ्तार करने की शक्तियां प्राप्त हैं। किन्तु ऐसे में किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने की यह शक्ति भी निरंकुश नहीं होती, कानून का उस पर पूरा अंकुश होता है। उच्चतम न्यायालय ने जोगेन्द्र कुमार के एक फैसले में यह कहा कि कोई भी गिरफ्तारी इसलिए नहीं की जाएगी कि पुलिस के लिए ऐसा करना विधिपूर्ण है।

गिरफ्तार करने की शक्तियां और गिरफ्तार करने का औचित्य दोनों ही अलग-अलग बातें है। अतएव एक पुलिस अन्वेषक को इसका औचित्य बताने के लिए सदैव तैयार रहना चाहिए। एक पुलिस अधिकारी के लिए यह भी अति-आवश्यक है कि वह ऐसे किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने से पूर्व पुलिस अन्वेषक द्वारा संकलित ठोस साक्ष्यों से युक्त तरीकों से पूर्णतया संतुष्ट हो जाने पर ही गिरफ्तारी के इस अधिकार का प्रयोग करे।

(क) यह सही है कि पुलिस को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 157 (1) के अधीन अभियुक्त को गिरफ्तार करने का विवेकाधिकार है, लेकिन गिरफ्तार करने के इस अधिकार का प्रयोग 1994 (31) एस. सी.–431 पर प्रकाशित जोगेन्द्र कुमार के उक्त मामले में अवधारित सिद्धांतों के अनुसार करना जरूरी है 2000 एस. सी. (41) 822।

(ख) ऐसे संबंधित मामलों में कोई तथ्य निर्णय करने के लिए उपलब्ध होने पर अभियुक्त के विरुद्ध मामलों को सिद्ध करने के लिए मौखिक साक्ष्यों से अधिक ठोस न्यायालयिक विज्ञान विशेषज्ञों की साक्षियों को अधिक महत्व दिया जा सकता है। इस दिशा में सदैव महत्वपूर्ण और कारगर सहयोग विधि विज्ञान संबंधित साक्षियों का होता है। क्योंकि वैज्ञानिक रिपोर्ट (आख्याओं) का विशेष उद्देश्य तो न्यायालय और अन्वेषक को सही दिशा निर्देश देना होता है। एक विधि विज्ञान विशेषज्ञ की दक्ष टीम एक जटिल और उलझी हुई गुत्थियों और परिस्थितियों में घटित घटना को सही दिशा निर्देश देने

में बहुत अधिक सहायक हो सकती है। जिसके आधार पर न्याय प्रक्रिया की नींव ठीक-ठीक रखी जा सकती है। जिससे अपराध को अपराधी से जोड़ा जा सके और उसे दंडित भी किया जा सके तथा निरपराधी संदिग्ध व्यक्ति को छोड़ा भी जा सके। क्योंकि, संविधान के अनुच्छेद 21 में व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार प्रत्येक नागरिक को प्राप्त है। जिसका हरण केवल भारतीय कानूनी प्रक्रिया द्वारा किया जा सकता है। जोकि सही और न्यायिक हो। उच्चतम न्यायालय ने स्पीडी ट्रायल को भी कैदी की दैहिक स्वतंत्रता का एक भाग माना है। परन्तु कभी-कभी उसके इस अधिकार का लाभ भी उसे नहीं मिल पाता है। क्योंकि न्यायिक प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए शीघ्र न्यायिक विशेषज्ञ की रिपोर्टों की प्राप्ति नहीं हो पाती। ऐसी आख्याओं की प्राप्ति की प्रतीक्षा करते-करते वर्षों बीत जाते हैं। मामलों की मांग के अनुसार देश में ऐसी प्रयोगशालाओं की अभी भी कमी है। जिसका प्रभाव यह है कि स्पीडी ट्रायल का लाभ अभियुक्त को कभी-कभी चाहते हुए भी नहीं मिल पाता है। दूसरा यह कि किसी भी अपराध को संशय से परे (beyond reasonable doubt) सिद्ध करना होता है। परन्तु अभियोजन को अधिकतर केवल मौखिक साक्षियों पर ही निर्भर रहना पड़ता है। अनुभव द्वारा देखा गया है कि वह या तो भय और प्रलोभन के कारण अदालत में आकर गलत बयानी कर जाते हैं या फिर मुकदमें की सुनवाई तक अधिक समय बीतने के कारण घटना की बारीकियों को भूल भी जाते हैं। जिससे संशय का लाभ पाकर अपराधी मुकदमों से रिहा हो जाता है। इससे भी व्यक्ति के मूलाधिकार का हनन होता है। क्योंकि वादी को न्याय नहीं मिल पाता है। इस कमी को पूरा करने के लिए मौखिक साक्षियों के साथ-साथ वैज्ञानिक विशेषज्ञों के साक्ष्यों की सहायता भी ली जा सकती है। मामलों को (beyond reasonable doubt) सिद्ध करने के लिए इस दिशा में विशेष क्रांतिकारी कदम उठाए जा रहे हैं। जिससे कानूनी प्रक्रिया को क्षमता के साथ-साथ गति भी मिली है। न्यायालयिक विज्ञान के क्षेत्र में बहुत अधिक प्रगति होती जा रही है। इसके और अधिक विस्तार की संभावनाएं हैं। जैसे कि डीएनए–टाइपिंग, कम्प्यूटर और सैल्यूलर–टैलीकोनी इंवेस्टिगेशन, फोरेंसिक इमेज–प्रोसैसिंग, शू–प्रिंट इमेज–कैप्चर एनेलिसिस, Speaker Identification, Forensic Toxicology, Osteology and Odontology इत्यादि।

उपरोक्त सेवाएं तो देश की कुछ एक प्रयोगशालाओं में ही उपलब्ध है। परन्तु शीघ्र ही अब पूरे देश में ऐसी सेवाएं उपलब्ध कराई जाएंगी। इस दिशा में बड़े भारी प्रयास किए जा रहे हैं। इससे न्यायालयिक वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं की सेवाओं को पूरे भारतवर्ष की प्रयोगशालाओं में उनकी संख्या वृद्धि के साथ-साथ उनकी गुणवत्ता को भी बढ़ाया जा सकेगा।

वर्तमान में भारत में पुलिस का दायित्व बहुत ही बढ़ गया है। आज उसका कर्तव्य केवल अपराधों को रोकना ही नहीं रह गया है। बल्कि अब उसे उन अपराधों के होने के पीछे छिपे कारणों को भी जानना जरूरी हो गया है, जिससे अपराधों की पूर्व रोकथाम हो सके। पुलिस को अपनी परंपरागत भूमिका अपराध नियंत्रण,

अपराध अंवेषण, सहायता, सुरक्षा, शांति और व्यवस्था के साथ-साथ उसे विकासशील समाज में सामाजिक न्याय की अवधारणा को भी साकार करने वाली भूमिका निभानी है। जिसमें उसे जन सहयोग की अति आवश्यकता है। यह अवधारणा तभी साकार हो सकती है जब पुलिसजन अपनी छवि को इस प्रकार से निर्मित करें, कि जनता को यह विश्वास हो जाए कि पुलिस केवल जनता और कानून के प्रति ही उत्तरदायी है। जो कि जनता को सही न्याय दिलाने पर ही बन सकती है। इसके लिए अपराध अंवेषण सही होने चाहिए। इस ध्येय की प्राप्ति के लिए उसे आधुनिक पुलिस विज्ञान से संबंधित न्यायालयिक विज्ञान व तकनीक का पूरा-पूरा प्रयोग करके, अंगुलछाप व अभिलेखों का परीक्षण कराकर साक्ष्यों को इकट्ठा करना चाहिए। क्योंकि ऐसे ही सबूत निर्दोष, ठोस और स्थायी रिकार्ड का काम करते हैं। जो कि पर्याप्त सक्षम और अपरिवर्तनशील होते हैं। न्यायालय इन्हें स्वीकारता है और इनको आधार मानकर शीघ्र न्याय दे सकता है। इससे सत्य को उजागर किया जा सकता है और जनता की भी संतुष्टि होती है। जिसमें उसके मूलाधिकार की रक्षा होती है। दूसरे शब्दों में संविधान की रक्षा होती है।

पिछले पचास वर्षों में इस क्षेत्र में बड़ा भारी परिवर्तन आया है। न्यायालयिक विज्ञान, अंगुलछाप विज्ञान और अभिलेख परीक्षण विज्ञान के समुचित प्रयोग द्वारा अपराध को अपराधी से सफलतापूर्वक और न्यायोचित व सही-सही जोड़ा जा सका है। जिससे आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। न्याय की साख और भी बढ़ी है। जैसे कुछ संगीन मामलों में देखा गया है।

इसलिए जहां भी जिस आपराधिक मामले में भी विधि विज्ञान से संबंधित सुराग मिल जाएँ उसका पूरा-पूरा प्रयोग किया जाए। घटना स्थल पर न्यायालयिक विज्ञान की टीम द्वारा अंवेषण का कार्य शीघ्रता-शीघ्र प्रारंभ हो जाना चाहिए। विलंब से सुरागों में फेरबदल हो सकता है व उनको हटाया या मिटाया भी जा सकता है। न्यायालयिक विशेषज्ञ की राय प्राप्त करके अपराध को अपराधी से जोड़ कर उसे शीघ्र गिरफ्तार किया जाना चाहिए। ऐसे साक्ष्य कारगर, उपयुक्त, ठोस और स्थाई होते हैं। क्योंकि आज अपराध पूरी तरह से पेशेवर बन चुका है। अपराधी अपराध कारित करने से पूर्व अपराध की सभी परिस्थितियों का पूर्वानुमान और आकलन करके पूर्ण सावधानियों से लैस होकर ही अपराध जगत में कूदता है। ताकि उसके द्वारा किए जा चुके अपराध का कोई भी चिन्ह पीछे न रह पाए, परन्तु न्यायालयिक वैज्ञानिक टीम घटना स्थल पर ऐसा कोई न कोई सुराग ढूंढ ही लेती है, जिसका ज्ञान भी अपराधी को नहीं होता है। क्योंकि अपराधी कही न कही कुछ न कुछ तो घटना स्थल पर छोड़ ही जाता है या फिर साथ ले जाता है। वह सुराग होते हैं, अंगुलछाप या फिर अभिलेख इत्यादि अन्य सुरागों के अतिरिक्त उपरोक्त विज्ञान का प्रयोग करके अपराधी को कानून के शिकंजे में कसकर गिरफ्तार किया जा सकता है। अपराधी चाहे कितना भी शातिर, चतुर और बुद्धिमान हो वह घटनास्थल पर अपना कोई न कोई ऐसा चिन्ह अवश्य ही छोड़ जाता है जिसको ढूंढकर साक्ष्य प्राप्त किए जा सकते हैं। अतएव घटनास्थल पर उपलब्ध परिस्थितियों व वस्तुओं का यथाशीघ्र अवलोकन, निरीक्षण करके उपलब्ध साक्ष्यों को एकत्रित करके स्थानीय विधि विज्ञान प्रयोगशाला में परिणाम प्राप्त करने के लिए सही तरीके से भेज देना चाहिए। तत्पश्चात घटनास्थल को सील कर देना चाहिए।

न्यायालयिक वैज्ञानिक घटना स्थल से साक्ष्यों को एकत्रित करके न्यायालयिक वैज्ञानिक प्रयोगशाला (एफ.एस.एल.) तक भेजने में निपुण नहीं होते हैं। उनको उन साक्ष्यों की तुलना करने और उनकी विशिष्टताओं को आकलित करने का कोई ज्ञान नहीं होता है वह तो केवल चांस प्रिंट को उभारने की प्रक्रिया और तकनीक से परिचित होते हैं, परन्तु अपनी अनुभवहीनता के कारण उन विशिष्टताओं के चुनाव

उनके आकलन और तुलना के ज्ञान से अनभिज्ञ रहते हैं। अतएव अब समय की मांग के अनुसार किन्ही विशिष्ट आपराधिक परिस्थितियों में अंगुलछाप व अभिलेख प्रशिक्षित विशेषज्ञों की सहायता भी ली जानी चाहिए। जो कि घटना स्थल पर उपलब्ध साक्ष्यों को भलीभांति मूल्यांकित कर उनका चयन कर सकें और उनको एकत्रित करवा सकें ताकि गम्भीर व उलझे हुए मामलों को उजागर करने व ठोस सबूतों को उपलब्ध करवाने में मददगार हो सकें।

(2) न्यायालयिक वैज्ञानिकों के पास अंगुल चिन्ह रिकार्ड करने की सभी सुविधाएं रहती हैं। जबकि विशेषज्ञों के पास संग्रहण रिकार्ड करने की कोई सुविधा नहीं रहती है

(3) अन्य न्यायालयिक वैज्ञानिकों की राय व साक्षी अकेली ही उतनी सटीक व ठोस नहीं होती जितनी कि अंगुलछाप व अभिलेख विशेषज्ञ की होती। हस्तलेख विज्ञान प्रोग्रेसिव विज्ञान है। परन्तु अंगुलछाप विज्ञान सटीक है, जिसमें किन्ही सम्भवनाओं को कोई भी स्थान नहीं है।

वर्तमान भारत में अंगुलछाप विज्ञान की कार्यप्रणाली तीन विभागों में विभाजित हुई है जो इस प्रकार है :

(1) अभिलेख विज्ञान तथा खोज कार्य।

(2) अभियोजन विभाग में दंडित अपराधियों की रिकार्ड-स्लिप तैयार करना।

(3) थाना स्तर पर बंदियों की सर्च-स्लिप तैयार करना।

अनुभव में आया है कि जिन मामलों में प्रत्यक्ष संदेही नहीं मिलता उनमें फाईनल रिपोर्ट लगाकर छुट्टी पा ली जाती है। ऐसी स्थिति में पीड़ित व्यक्ति को कोई न्याय नहीं मिल पाता। यह उसके असंतुष्ट होने का बहुत बड़ा कारण होता है। इससे भी उसके मूलाधिकारों का हनन होता है।

जब पीडित को न्याय नहीं मिलता तब अपराधी ओर भी उत्साहित होता है और अपराधों में वृद्धि करता चला जाता है। यदि किसी आपराधिक मामलें में घटना स्थल पर या घटित घटनाक्रम में कोई अंगुलछाप, पदछाप, हस्तलेख मृत्युपत्र मिल जाता है या फिर कोई ऐसी वस्तु जो उक्त घटना को उजागर करती है ऐसे मामलों में विशेषज्ञ की राय प्राप्त करके मामले को शीघ्रता शीघ्र सुलझाया जा सकता है। जिससे सन्देही व्यक्ति की गिरफ्तारी भी शीघ्रता शीघ्र की जा सकती है और निर्दोष को छोड़ा जा सकता है। अंगुलछाप आज भी पहचान का सबसे सरल, सस्ता और सुलभ साधन है। अपराध और अपराधी की पहचान इसी साधन के द्वारा सबसे ज्यादा और शीघ्र की जा सकती है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की दसों अंगुलियों चिन्ह एक दूसरे से भिन्न होते हैं। दो व्यक्तियों के अंगुली चिन्ह भी भिन्न होते हैं। यहां तक कि दो जुड़वां व्यक्तियों के अंगुली चिन्ह अलग-अलग होते हैं। अंगुली चिन्ह के गर्भ काल से ही निर्मित हो जाते हैं। जन्म से मृत्यु तक यह निशान बदलते नहीं है न यह कटते है न गिरते हैं। अंगुली की त्वचा कट जाने या जल जाने पर भी पुनः वही अंगुली निशान अंगुली के पोरों पर स्वतः निर्मित हो जाते हैं। किसी मृत शरीर के अंगुली निशानों को रसायन क्रिया द्वारा उभारकर उनकी तुलना और मिलान किया जा सकता है। अतएव अंगुलछाप द्वारा व्यक्ति की सही पहचान शीघ्र की जा सकती है। अंगुलछाप व न्यायालयिक विज्ञान का प्रयोग करके जाना जा सकता है कि क्या अपराध हुआ है कब हुआ है, किसने किया है, कैसे किया है, और क्यों किया है। अंगुलछाप विज्ञान का प्रयोग करके यह जाना जा सकता है कि क्या अपराधी वास्तव में घटनास्थल पर मौजूद था। अंगुलचिह्न वास्तव में अपराधी का विजिटिंग कार्ड होता है कि वह अमुक स्थान पर उस समय मौजूद था।

वर्तमान में न्यायालयिक प्रयोगशालाओं अंगुलछाप, पदछाप की आधुनिकीकरण योजना के अंतर्गत अंगुलछाप-

–कार्पोरेटर और प्रिंट डेवलपिंग मशीन विदेशों से आयातित की गई है। अन्य बहुउपयोगी उपकरणों की खरीदारी किए जाने के भी प्रयास हो रहे हैं। अपराध अंवेषण में इन तकनीकों का प्रयोग आशातीत सफलता प्रदान कर रहा है।

याद रहे कि न्यायालयिक विज्ञान का क्षेत्र अंगुलछाप विज्ञान व अभिलेख विज्ञान से अलग और भिन्न प्रकृति का है। क्योंकि न्यायालिक विज्ञान में निम्नलिखित विधियों का प्रयोग किया जाता है–

(1) रसायन शास्त्र

(2) चिकित्सा विज्ञान

(3) शल्य विज्ञान

(4) जीव शास्त्र भौतिकी

(5) गणित

(6) फोटोग्राफी इत्यादि।

न्यायालयिक विज्ञान का महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है :

(1) विशिष्टता अथवा वैयक्तिता का नियम।

(2) विनियम का नियम, उत्तरोतर विनिमय का नियम।

(3) सम्भावना का नियम।

इसी तरह से अंगुलछाप व अभिलेख, हस्तलेख परीक्षण विज्ञान का महत्त्वपूर्ण सिद्धांत है।

(1) विशिष्टता, (2) स्थायित्व, (3) अपरिवर्तनशीलता, (4) एक-दूसरे से भिन्नता का नियम, (5) तुलना का नियम, (6) सम्भावना का नियम।

किसी भी मामले में यदि कोई लेख संदिग्ध है और उसको परीक्षण और मिलान संदेही व्यक्तियों के हस्तलेख द्वारा किया जाना आवश्यक होता है तो ऐसी स्थिति में अंवेषण अधिकारी को अभियुक्त का नमूना हस्तलेख प्राप्त करने का अधिकार (धारा 311 की दं.प्र.सं.) में है।

विवेचना के दौरान यदि किसी अभिलेख के संबंध में यह संदेह हो कि वह अभियुक्त द्वारा लिखा गया है तो विवेचक संबंधित अभियुक्त का नमूना हस्तलेख/हस्ताक्षर प्राप्त कर सकता है और विवादित अभिलेख और नमूना हस्तलेख व हस्ताक्षर का मिलान विधि विज्ञान प्रयोगशाला में भेजकर करा सकता है।

अंधेरे में गुम हुए अपराधों का पता लगाने में न्यायालयिक साक्ष्य बड़े ही कारगर उपाय और माध्यम बनते हैं। यह एक जीवित साक्षी का रूप बनकर कानून के सहायक बन जाते हैं। अतएव उन्हें घटनास्थल से एकत्रित करके उन्हें विधि विज्ञान प्रयोगशाला में पहुंचाना और मामले की सुनवाई तक सावधानीपूर्वक संजोकर रखना अतिआवश्यक और अनिवार्य है। संदिग्ध चिह्नों को दीर्घकाल तक संजोकर रखना इसलिए भी जरूरी होता है कि जिससे समय आने पर उनका परीक्षण, निरीक्षण करावाकर उन्हें बयानों के समय अदालत में दर्शाया जा सके। इन्हीं भौतिक साक्ष्यों के परम्परागत संयोजन से एक ठोस सत्य सबके सामने आता है। जिससे संतुष्ट होकर न्यायाधीश अपराधी को नियमानुसार कानूनी दण्ड देता है। इस प्रकार न्यायालयिक विज्ञान अपराधी को दण्ड दिलाने व उसे दण्डमुक्त कराने में अपना सहयोग देते हैं।

दूसरी ओर एक अपराध अंवेषण के लिए यह भी अति आवश्यक है कि वह किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने से पूर्व अपने अंवेषण द्वारा संकलित साक्ष्यों से युक्ति-युक्त तरीकों से संतुष्ट होने पर ही गिरफ्तारी के अधिकार का प्रयोग करे। न्यायालयिक विज्ञान संबंधित साक्ष्य ही यह संतुष्टी उसे प्रदान कर सकते हैं।

अतएव यह अपेक्षित है कि एक विवेचना अधिकारी विवेचनाओं और अनुसंधानों में विश्लेषणात्मक वृद्धि को स्वीकार करे। एक स्वात्मक बुद्धि, विवेचना अधिकारी को स्वस्थ चिंतन अथवा परिस्थितियों के अनुकूलन विवेचना करने की छूट दिए जाने की थोड़ी स्वाधीनता तो होती ही है, परन्तु उसके लिए यह भी आवश्यक है कि पुलिस के मंतव्य के साथ काम करने वाले विवेचकगण दण्ड-विधि

अर्थात फौजदारी की तीनों प्रमुख परिस्थितियों में प्रवेश करके उनकी कानूनी क्षमताओं को भलीभांति परिलिक्षित कर लें। यह परिस्थितियां होती हैं। दण्ड-विधि, साक्ष्य अधिनियम तथा प्रक्रिया-विधि क्योंकि किसी आपराधिक प्रकरण की विवेचना में अपनायी गई कार्य प्रणाली भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितनी कि अपराध को प्रमाणित करने के लिए एकत्रित किए गए साक्ष्यों की स्थिति और उनकी गुणवत्ता। अतएव एक पुलिस कर्मी प्रक्रिया में एक विवेचक का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। अतएव उसे सहजता से उत्प्रेरित किए जाने की भी महती आवश्यकता है। साथ ही साथ उसे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से साक्ष्यों व तथ्यों का ठीक-ठीक विश्लेषण करने की आदत भी डालनी चाहिए।

जैसा कि पिछले वर्ष 307 आई.पी.सी. के एक मामले में एक युवक सिकंद्राबाद थाने पर गिरफ्तार हुआ, जो बिहार का रहने वाला था जब उसे बुलंदशहर, सी.जे.एम. की अदालत में लाया गया वह किसी तरह वहां जाते-जाते रास्ते में फरार हो गया। पुलिस बताए गए पते पर बिहार में उसके घर से उसी नाम के अपराधी को गिरफ्तार करके ले आई और उसे जेल में बंद कर दिया। सन 2004 में पता चला कि वह पहले से गिरफ्तार किए गए अपराधी का बड़ा भाई था जो वहां शिक्षक था और उसे नहीं पता था कि छोटे और आवारा भाई ने जो जेल से फरार हुआ था वह जब गिरफ्तार करके जेल में लाया गया था तभी कुटिलता से उसने अपनी जगह भाई का नाम जानबूझकर लिखवा दिया था। क्योंकि वह शुरू से ही उससे ईष्या और द्वेष करता था। गिरफ्तार हुए उस भाई का कोई भी व्यक्ति उसके इस कथन को स्वीकार नहीं कर रहा था कि वह निर्दोष है और उसने कोई अपराध नहीं किया है। वह एक अमन पसंद और अच्छा नागरिक है, उसका नाम उसके भाई ने गलत जानबूझकर लिखवाया था, उसने कोई अपराध नहीं किया है। इस गुत्थी को सुलझाने के लिए अंगुलछाप विशेषज्ञ की सहायता ली गई, जिससे जेल में जाकर कथित दोंनों बार की गई गिरंफ्तारियों के अंगुलछाप रिकार्ड का परीक्षण किया और मौजूदा अभियुक्त के नमूना अंगुलछापों से मिलान किया और यह पाया कि दोनों बार जेल में रिकार्ड किए गए एक ही नाम के एक ही व्यक्ति होने की सम्भावना वाले अभियुक्तों के अंगुलछाप अलग-अलग वर्ग के थे और आपस में मेल नहीं खाते थे। परन्तु दूसरी बार गिरफ्तार किए गए उस एक व्यक्ति के नमूना अंगुलछाप एक से थे। अतएव यह सिद्ध हो गया था कि दोनों बार गिरफ्तार किए गए व्यक्ति भिन्न-भिन्न थे। इसके अतिरिक्त जेल के रिकार्ड के अनुसार उस कथित एक ही नाम के दो व्यक्ति थे। क्योंकि दोनों व्यक्तियों की लम्बाई, चौड़ाई, विशेष चिन्ह, वजन, रंग-रूप अलग-अलग थे। अतएव अंगुल चिन्ह भिन्न-भिन्न होने के साथ-साथ उनकी बॉडी डिटेल भी अलग-अलग थीं। अतः वह एक नहीं दो अलग-अलग व्यक्ति थे। अतएव मजिस्ट्रेट ने उसे रिहा कर दिया। गिरफ्तारी गलत हो गई थी, के दिशा-निर्देश अंगुलछाप विशेषज्ञ ने अंगुलछाप विज्ञान का प्रयोग करके दिए। अतएव उस शिक्षक की दैहिक स्वतंत्रता का अधिकार उसे यथाशीघ्र मिल पाया। संविधान के अनुच्छेद-21 के अनुसार और संविधान की रक्षा हुई।

❐

सुरक्षा बलों में बढ़ता तनाव और समाधान

के.के. कर्ण

सहायक प्रचार अधिकारी,
सशस्त्र सीमा बल, नई दिल्ली

भारत दुनिया के विशालतम देशों में से एक है। आज स्वतंत्रता प्राप्ति के 60 वर्षों के बाद जहां हमें अपने आंतरिक और बाह्य सुरक्षा से निश्चिंत होना चाहिए वहीं हमारे पड़ोसी राष्ट्र पाकिस्तान, बांग्लादेश, म्यांमार, नेपाल और चीन में दिन पर दिन बदलती राजनीतिक स्थिति और कुछ पड़ोसी राष्ट्रों द्वारा भारत में जारी राष्ट्र विरोधी गतिविधियों को बढ़ावा देने के कारण हमें अपनी बाह्य सुरक्षा के प्रति गंभीर होना पड़ता है इसी तरह देश में जारी आतंकवाद, उग्रवाद, नक्सलवाद तथा आज की भागदौड़ भरी जिंदगी के कारण देश में बढ़ती अस्थिरता के चलते हमें अपने आंतरिक सुरक्षा के प्रति भी चिंतित होना पड़ता है। दूसरी और हर ओर जारी प्रतिस्पर्धा और भागमभाग के कारण आज जहां हर आदमी अपने को तनावग्रस्त महसूस कर रहा है वहीं देश की सीमाओं पर तैनात सेना और सुरक्षा बलों के जवानों को देश के आंतरिक एवं बाह्य मोर्चों पर विभिन्न प्रकार के चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों का भी सामना करना पड़ रहा है। इसी तरह अपराधों के नए स्वरूप तथा आतंकवादियों की बदलती कार्य प्रणाली के कारण सुरक्षा बलों पर कार्य का दबाव दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। इसके दुष्परिणाम स्वरूप सुरक्षा बलों में असंतोष, तनाव, अवसाद, घुटन, हत्या--आत्महत्या, क्रोधी स्वभाव, असुरक्षा और तनाव की प्रवृत्ति के रूप में सामने आ रहा है। सैनिकों और अर्द्धसैनिक बलों में बढ़ रहे उपरोक्त कारणों से तनाव और आत्महत्या की प्रवृत्ति से सरकार भी काफी चिंतित है तथा इस पर गंभीरता से विचार कर रही है और इसे रोकने के लिए मनोवैज्ञानिकों की सेवाएं लेने पर भी विचार किया जा रहा है।

2 अगस्त 2007 को केंद्रीय मंत्रिमंडल ने देश के सैनिकों में असंतोष, आत्महत्याएं और तनाव की बढ़ती घटनाओं के मद्देनजर सैनिकों के लिए कई नई सहूलियतों की घोषणा की तथा उग्रवाद आतंकवाद प्रभावित इलाकों के अलावा तनावपूर्ण माहौल में तैनात सैनिकों के भत्तों, सेवा शर्तों और सुविधाओं में सुधार के व्यापक प्रस्ताव को मंजूरी दी। इसके तहत जम्मू-कश्मीर और पूर्वोत्तर भारत में आतंकवादी गतिविधियों वाले इलाकों में तैनात सेना के अधिकारियों और सेना के जवानों को घर जाने के लिए साल में एक और रेलवे वारंट देने के साथ-साथ अपनी पसंद के किसी भी स्थान पर भ्रमण–यात्रा के लिए छुट्टी और अन्य सुविधाएं देने की सुविधा शामिल है ताकि परिवार से दूरी और सीमाई क्षेत्रों में तैनाती के कारण सैनिकों में बढ़ते तनाव को कम किया जा सके। इसके अलावा ऊंचाई वाले स्थान पर तैनात सेना के अधिकारियों को बढ़ी हुई दर पर 5600 रुपए प्रतिमाह और अधिकारियों से नीचे रैंक वाले कर्मियों को 3734 रु. प्रतिमाह भत्ता देने का फैसला लिया गया है। मंत्रिमंडल के इस फैसले से सैन्य कर्मियों का तनाव दूर कर उनका हौसला बनाए रखने में मदद मिलेगी। मंत्रिमंडल ने यह कदम ऐसे समय पर उठाया जब सेना में हर साल आत्महत्या की सौ से अधिक घटनाएं सामने आ रही हैं। वर्ष 2007 में तकरीबन 55 सैनिक आत्महत्या कर चुके हैं। तनाव के कारण सैनिकों में आपसी फसाद की घटनाएं भी उफान पर हैं। वर्ष 2007 में ऐसी छह घटनाएं हो चुकी हैं। सैनिकों के तनाव व कार्य के दबाव के कारण अब सेना के प्रति आम जनता का आकर्षण घटा है तथा सेना में भारी पैमाने पर विभिन्न रैंकों के पद खाली हैं।

अर्द्धसैनिक बलों में तनाव की स्थिति :

इधर देश की आंतरिक सुरक्षा में तैनात अर्द्धसैनिक बलों की स्थिति भी कुछ ऐसी ही है। इस बीच गृह मंत्रालय भी अर्द्धसैनिक बलों के जवानों के तनाव और आत्महत्या की प्रवृत्ति पर विचार कर रही है तथा जवानों के कल्याण के लिए कई कल्याणकारी कार्यक्रम चला कर उसे कम करने का प्रयास कर रही है। इस बीच केंद्रीय गृह मंत्रालय द्वारा आंतरिक सुरक्षा बनाए रखने और देश की सीमाओं पर चौकसी के लिए केंद्रीय पुलिस बलों की उत्तरोत्तर महत्वपूर्ण और अत्याधिक जोखिम की भूमिका को ध्यान में रखते हुए केंद्रीय पूलिस बलों के वास्तविक व्यय में तद्नुरूप वृद्धि की जाती रही है। साथ ही केंद्रीय पुलिस बल के कार्मिकों के कल्याण पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। छठे वेतन आयोग की सिफारिशों से हालांकि रक्षा व अर्द्धसैनिक बलों में कुछ असंतोष फैला है पर सरकार उसे दूर करने का प्रयास कर रही है।

सुरक्षा बलों में तनाव के कारण :

अर्द्धसैनिक बलों के जवानों में निम्न कारणों से तनाव पैदा होता है :

1. अपराधों के बदलते स्वरूप और आतंकवादियों की बदलती कार्य प्रणाली के कारण दिन पर दिन कार्य का बढ़ता दबाव तथा बढ़ती कार्यावधि के कारण थकान, अनिद्रा, चिड़चिड़ापन भी तनाव का कारण है।
2. किसी उच्चाधिकारी द्वारा किसी जवान के

केंद्रीय पुलिस संगठन में पनप रहे तनाव और असंतोष के कारण आत्महत्या करने वाले जवानों का आंकड़ा निम्न है :

बल	**वर्षवार आत्महत्या**			
	2005	2006	2007	2008
आई.टी.बी.पी.	2	5	4	—
बी.एस.एफ.	31	37	35	7
असम राईफल्स	16	18	13	1
सी.आई.एस.एफ.	13	8	11	1
एन.एस.जी.	—	—	—	—
सी.आर.पी.एफ.	19	30	48	14
एस.एस.बी.	6	6	6	—

(15मार्च, 2008 तक)

(स्रोत : हिंदुस्तान)

इस तरह वर्ष 2005 से 2008 के बीच केंद्रीय पुलिस बल के 427 जवानों ने आत्महत्या की जबकि इस बीच 21 हजार से भी अधिक जवानों / अधिकारियों ने पुलिस बलों से इस्तीफा दे दिया। एक सर्वेक्षण में यह भी पता चला है कि जोखिम भरी सेवा से देश के जवान कतई परेशान नहीं होते। इस बात का पता चार्ट में एन.एस.जी. के आंकड़े से चलेगा जहां अब तक आत्महत्या की प्रवृति नहीं पनपी है। इस तरह जवानों के तनाव व आत्महत्या के पीछे सीमाई क्षेत्र में दुर्गम स्थानों पर उनकी तैनाती घरेलू परेशानी, परिवार की चिंता, अधिकारियों द्वारा जवानों के प्रति रुखा व्यवहार, तैनाती में भेदभाव और उनके मनोरंजन की व्यवस्था में कमी मुख्य कारण है।

साथ पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाना या काफी सख्ती से पेश आना।

3. जवान द्वारा कार्य के दौरान जाने–अनजाने में ऐसी गलती हो जाना जिससे कार्यालय के साथ–साथ समाज में भी उसकी प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचे तथा जो उसकी नौकरी पर भी प्रतिकूल असर प्रदान करती हो।
4. पारिवारिक परिस्थितियां भी जवानों में तनाव पैदा करती हैं जैसे घर की आर्थिक तंगी, परिवार से अलगाव की स्थिति में उसकी पत्नी का किसी गैर पुरुष से संबंध स्थापित करना, अविवाहित की स्थिति में किसी से प्रेम करने पर लड़की द्वारा ठुकराने तथा दोस्तों द्वारा खिल्ली उड़ाने, घर में पिता–माता या सगे–संबंधियों के साथ जारी घरेलू तनाव की स्थिति।
5. किसी लाईलाज रोग जैसे एड्स आदि से पीड़ित होना तथा इसके कारण सामाजिक तिरस्कार की भावना।
6. बल में साथियों द्वारा उस पर अनावश्यक छींटाकशी करने या उसकी किसी गलती पर अधिकारियों द्वारा उसे सार्वजनिक रूप से प्रताड़ित करना।
7. जवानों को कार्य की अधिकता के कारण उच्चाधिकारी द्वारा उसके द्वारा मांगी गई छुट्टी प्रदान करने से इंकार करना।

तनाव की पहचान :

जवानों में तनाव का आभास उसके निम्न व्यवहार से भी चलता है :

1. पुलिस व अर्द्धसैनिक बलों के प्रति दिन पर दिन समाज में घटता सम्मान तथा आज के कार्पोरेट वर्ग की तुलना में उनका वेतन काफी कम होना।
2. लंबे समय तक सुरक्षा कर्मियों की दुर्गम क्षेत्र में तैनाती।
3. जवान का अत्यधिक गुस्सैल या चिड़चिड़ा होते जाना।
4. कार्य के प्रति उसका रुचि में कमी आना अनुशासनहीता की प्रवृत्ति बढ़ना।
5. सिगरेट, शराब व अन्य नशीली चीजों के सेवन में अप्रत्याशित वृद्धि होना।
6. मानसिक रूप से शिथिल हो जाना तथा साथियों से बातचीत नहीं करना तथा ऐसा प्रतीत होना कि वह लगातार सोच रहा है।
7. धार्मिक प्रवृत्ति में अचानक वृद्धि हो जाना।

तनाव को दूर करने के उपाय :

अर्द्धसैनिक बल के जवानों के सुकून के लिए निम्न बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए:

1. योग : सरकार योग के जरिए भी जवानों के मानसिक तनाव को दूर करने पर बल दे रही है। स्वयं को नियंत्रित करने का सर्वश्रेष्ठ तरीका है ध्यान और योग। यह जवानों को अंदर से भी मजबूत बनाता है तथा भावनाओं को नियंत्रण में करने में मदद करता है।

2. जवान : अधिकारी परस्पर संबंध : सरकार और अधिकारियों और जवानों के बीच की दूरी को भी कम करने का प्रयास कर रही है। आधुनिक भागदौड़ और तनावग्रस्त जिंदगी में उच्चाधिकारियों को भी सलाह दी जाती है यदि उन्हें जवानों के साथ सख्ती से पेश आना है तो अवश्य पेश आएं परंतु अपने आदेश को लच्छेदार भाषा में बोलने के बजाय मीठे तरीके से बोलें। अधिकारियों को जवानों के साथ संयम बरतने की सलाह दी जाती है साथ ही यह भी सलाह दी जाती है कि वे उनसे दुर्व्यवहार करने से बचें। इससे वे अपनी कड़वी बातों को भी जवानों को सहजता से कह सकते हैं। सेनानायकों को

कार्पोरेट जगत के एक अच्छे मानव प्रबंधक की तरह कार्य करना चाहिए तथा जवानों के साथ संवाद लगातार बनाए रखना चाहिए। इससे जवानों में अधिकारियों की ओर से होने वाले तनाव में कमी आएगी।

3. जवानों के सामाजिक पहलू पर ध्यान देना होगा : चूँकि जवान अपने परिवार से दूर सीमाओं पर तैनात होते हैं ऐसा पाया गया है कि आत्महत्या करने वाले अधिकतर जवान आत्महत्या सामाजिक, पारिवारिक, आपराधिक या दीवानी कारणों से करते हैं। आज जवानों की समस्याओं पर भी ध्यान देने तथा उसके समाधान के लिए उन्हें समय पर छुट्टी देने की जरूरत पर भी जोर दिया गया है। सरकार जवानों के मनोबल को बनाए रखने के लिए उनके पारिवारिक आवास (सेपरेटेड फैमिली एकोमेडेशन) की स्थापना कर रही है ताकि जवान अपने परिवार से आवश्यकतानुसार मिल सकें और घर की समस्या का समाधान कर पाएं। इसके साथ ही सरकार जवानों के बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य पर भी ध्यान दे रही है।

4. सेवा शर्तें : जवानों में काम और सेवा के प्रति उत्साह बनाए रखने के साथ-साथ ही उनके मनोबल को बनाए रखने के लिए उनकी प्रौन्नति और प्रशिक्षण पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। काम के घंटों में तर्कसंगत बदलाव का भी प्रयास किया जा रहा है।

5. वातावरण : स्वच्छ वातावरण में रहने वालों का मन सदैव प्रसन्नचित्त रहता है। वातावरण को स्वच्छ बनाने के लिए जवानों के बैरकों को अत्याधुनिक तरीके से बनाने पर भी ध्यान दिया जा रहा है तथा इसके आसपास हरियाली के लिए वृक्षारोपण कर पेड़-पौधे लगाए जा रहे हैं।

6. जवानों को समय पर भोजन व सोने की व्यवस्था : जवानों को पैष्टिक व मनोनुकूल भोजन समय पर मिल सके इसके लिए उनकी बैरक में भोजशाला को और भी अत्याधुनिक बनाया जा रहा है। उनके सोने व आराम पर भी ध्यान दिया जा रहा है।

7. जवानों को नींद न आना : भी उनके तनाव का कारण हो सकता है। नींद न आने के कारण जहां उनके शरीर पर बुरा असर पड़ता है वहीं इसके कारण डिप्रेशन जैसी स्थिति पैदा हो जाती है। ऐसी स्थिति में जवानों को चाहिए कि वे तत्काल अपने यूनिट के चिकित्सक से संपर्क करे। सोने से जहां शरीर को आराम मिलता है वहीं इससे दिन भर की थकान भी दूर हो जाती है।

नींद के लिए इन्हें भी आजमाएं : अच्छी नींद के लिए संभव हो तो खाने के बाद थोड़ा टहलें, अपनी मनपसंद संगीत सुनें या पुस्तक पढ़ें, अशांती से दूर रहें, कोशिश करें कि आपका स्वभाव हल्का बना रहे, सोने से पूर्व पांव-हाथ धोकर सोएं तथा बिस्तर को अच्छी तरह झाड़ लें।

8. मनोरंजन भी तनाव को कम करता है : मनोरंजन की तनाव को कम करने में अहम् भूमिका है। इसके बगैर सुख की कल्पना नहीं की जा सकती। संगीत जवानों के मन मस्तिष्क को शांति पहुंचाने में खासी भूमिका निभाता है। इसीलिए वाहिनियों, सीमा बहिर चौकी, कंपनी मुख्यालय एवं अन्य स्थानों पर जवानों के मनोरंजन पर विशेष ध्यान देते हुए उनके लिए रिक्रिएशन रूम की व्यवस्था की जा रही है। इन रिक्रिएशन रूमों में टी.वी. वी.सी.डी. टेप रिकार्डर व अन्य मनोरंजन की वस्तुएं तथा खेलकूद की चीजें होती हैं। खेलकूद, गीत व संगीत की तनाव कम करने में अहम् भूमिका है।

9. हाई ब्लड प्रेशर : जवानों को नशे का कम सेवन करना चाहिए तथा हाई ब्लड प्रेशर से बचना चाहिए। हाई ब्लड प्रेशर से तनाव में वृद्धि होती है।

10. जवानों के तनावों के अध्ययन व उसे दूर करने के लिए वाहिनियों में मनोचिकित्सकों की भी तैनाती की जानी चाहिए तथा प्रशिक्षण केंद्रों में जवानों को शारीरिक तौर पर मजबूत करने के साथ-साथ मानसिक रूप से भी तंदुरुस्त करना चाहिए।

11. दुर्गम क्षेत्रों में पारी के आधार पर सभी को भेजा जाए। यदि किसी जवान का कार्यकाल वहां समाप्त हो रहा हो तो कार्मिक विभाग को चाहिए कि वह कार्यकाल के समाप्त होने से पूर्व स्थानांतरण आदेश भेज दें।

12. सेपरेटेड फैमिली एकोमोडेशन के अलावा वाहिनियों में भी अधिक से अधिक फैमिली क्वार्टर का निर्माण करना चाहिए ताकि जवानों की पारिवारिक चिंता दूर हों।

जवान मनोबल को बनाए रखने के लिए इसे भी आजमाएं:

1. अपने आत्मविश्वास और आंतरिक शक्ति को बनाए रखें तथा शांतचित्त होकर काम करें।
2. जब कभी भी जीवन में उतार-चढ़ाव आए अपनी पिछली सफलताओं को याद कर लें।
3. अपनी सोच सकारात्मक रखें तथा किसी दूसरे की ओर से आने वाले नकारात्मक अहसास को काट फेंके।
4. नए अवसरों और अनुभवों को आत्मसात करें।
5. अपने कार्य को बुद्धिमता और सहजता से निपटाएं।

❐

पुलिस का विभिन्न वर्गों के साथ व्यवहार

डा. आर. के. सक्सेना

प्रोफेसर समाजशास्त्र

डा. श्रीमती गीता सक्सेना

गीता भवन गरगज कालोनी

वहोड़ापुर, ग्वालियर (म.प्र.)

पुलिसकर्मियों के व्यवहार में समानता बनी रहे, पुलिसकर्मियों का व्यवहार मनमाना, असंतुलित, असंयमित तथा असुविधाजनक न हो जाए तथा पुलिस बल में अनुशासन, कर्तव्यनिष्ठा व ईमानदारी के प्रति जागरूकता संस्थापित हो, इस तथ्य को ध्यान में रखकर पुलिसकर्मियों के व्यवहार को लेकर कुछ बातें निश्चित की गई हैं। जिसका पालन करना प्रत्येक पुलिसकर्मी के लिए अनिवार्य है। वस्तुतः ये वे व्यवहार प्रतिमान है जिनके अनुसार पुलिसकर्मी को यह तय करना होता है कि उसको किसके साथ कैसा व्यवहार करना है। महिलाओं, बच्चों, वृद्धों, निःशक्तजनों, साक्षियों, छात्रों तथा अपराधियों के साथ पुलिस के व्यवहार के पृथक-पृथक प्रतिमान है। सभी के साथ एक ही व्यवहार प्रतिमान नहीं अपनाया जा सकता।

पुलिस का कार्यक्षेत्र बहुत व्यापक है। इसका संपर्क जहां एक ओर अपराधियों, दुष्चरित्र व्यक्तियों से होता है वहीं उसके संपर्क में सभ्य सुशिक्षित व्यक्ति भी आते हैं। ऐसी अवस्था में सभी प्रकार के व्यक्तियों के साथ एक ही प्रकार का व्यवहार नहीं किया जा सकता। अलग-अलग व्यक्ति के साथ उसको भिन्न-भिन्न प्रकार का व्यवहार करना पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन में साक्षियों के साथ पुलिस का व्यवहार कैसा होना चाहिए तथा अपराधियों के साथ पुलिस का व्यवहार कैसा होना चाहिए तथा अपराधियों के साथ पुलिस कैसा व्यवहार करती है इस पर सर्वेक्षण के आधार पर तथ्यों का संकलन कर वस्तु स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्रीय सर्वेक्षण पर आधारित है। इसमें चयनित न्यादर्शों से साक्षात्कार अनुसूची के आधार पर समंक संकलित किए गए तत्पश्चात् संकलित समंकों को वर्गीकृत व सारणीकृत कर यहां विश्लेषित किया गया है।

साक्षियों के साथ पुलिस का व्यवहार

दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 327, 327 (3), धारा 273, धारा 299, धारा 173 (6) आदि में साक्षियों के लिए अनेक व्यवस्थाएं की गई है। भारतीय दंड संहिता की धारा 228 स्पष्ट करती है कि बलात्संग के मामले में अपराध की पीड़िता के नाम तथा पते को प्रकाशित करने से प्रतिबंधित किया गया है। अतः साक्षियों के लिए दंड प्रक्रिया संहिता, भारतीय दंड संहिता, किशोर न्याय (केयर एंड प्रोटेक्शन ऑफ चिल्ड्रन) एक्ट 2000 तथा भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 अनेक प्रावधान प्रावधानित करता है।

साक्षी कौन? साक्षी से अभिप्रेत है ऐसा व्यक्ति जो किसी घटना के संबंध में कुछ जानता है एवं पुलिस के समक्ष या न्यायालय के समक्ष घटना का बयान करता है या प्रमाण देने को प्रस्तुत होता है। यह घटना उसकी आँखों देखी हो सकती है, उस व्यक्ति के समक्ष की गई कार्रवाई के संबंध में हो सकती है, यदि कोई दस्तावेज, प्रतिज्ञापत्र या पंचनामा आदि किसी व्यक्ति के समक्ष लिखा जाता है तो वह व्यक्ति उस दस्तावेज की प्रमाणिकता सिद्ध करने वाला हो सकता है वह व्यक्ति जांच अधिकारी या न्यायालय के समक्ष उपस्थित होता है या ऐसे व्यक्ति को पुलिस अथवा न्यायालय के समक्ष उपस्थित होने को कहा जाता है।

ऐसे सभी व्यक्ति साक्षी के अंतर्गत आते हैं जो

घटना के संबंध में कुछ जानते हैं तथा जांच अधिकारी के समक्ष बयान देने हेतु प्रस्तुत होते हैं। पुलिस अधिकारी इनका घटनास्थल पर बयान लेते हैं तथा पुष्टि हेतु आवश्यकता पड़ने पर न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होने के लिए निर्देश देते हैं। यहां यह स्पष्ट है कि साक्षी के बयान घटनास्थल पर ही लिए जाने चाहिए। घटनास्थल के अतिरिक्त थाने में या अन्यत्र स्थान पर बयान हेतु बुलाकर साक्षी को परेशान नहीं करना चाहिए। एक तथ्य यहां महत्वपूर्ण है वह यह कि पुलिस कार्रवाई की सफलता साक्षी के बयान पर निर्भर करती है, अतः पुलिस साक्षी पर निर्भर है, साक्षी पुलिस पर निर्भर नहीं है। साक्षी साक्ष्य देने के लिए तैयार समाज का कल्याण करता है, पुलिस की मदद करता है, न्यायालय को निर्णय तक पहुंचने में मदद करता है तथा अपना अमूल्य समय नष्ट करता है। साक्ष्य देने के बदले में उसे कुछ नहीं मिलता। हां इतना अवश्य है कि जिसके विरुद्ध वह गवाही देता है उससे वैमनस्यता बढ़ जाती है तथा इस कारण कई बार उसे भारी क्षति उठानी पड़ती है। इसी कारण साक्षियों की सुरक्षा व संरक्षण संबंधी अनेक विधिक योजनाएं बनाई गई हैं जो अग्रांकित हैं :

(1) आपराधिक घटना के प्रत्यक्षदर्शी या अन्येत्तर संबंद्ध गवाह के निवास को चिन्हित कर अपराधी की पहुंच से दूर रखना।

(2) किसी अज्ञात स्थान पर उसके निवास की व्यवस्था करना।

(3) गवाह के भरण-पोषण तथा जीवन के लिए आवश्यक सुविधाओं को पूर्ण करने के लिए आर्थिक संसाधनों की व्यवस्था करते रहना।

(4) भारत के विधि आयोग तथा माननीय उच्चतम न्यायालय के अनेक निर्णयों का अध्ययन करना जिसमें गवाहों की दुर्दशा का वर्णन किया गया है और न्यायालयों के द्वारा न्यायिक कार्यवाही को स्थगित करते रहने तथा गवाह को निराश्रित प्रतीक्षारत करके कई बार आहूत करने से उत्पन्न दुखद स्थिति के संबंध में चिंता व्यक्त की गई है।

गवाह या साक्षी के साथ पुलिस को कैसा व्यवहार करना चाहिए यह सिद्धांत का प्रश्न है तथा गवाह के साथ पुलिस कैसा बर्ताव करती है यह व्यवहार का प्रश्न है। व्यावहारिक पहलू का परीक्षण करने हेतु अध्ययन क्षेत्र के 600 चयनित न्यादर्शों से प्रश्न किए गए जो तथ्य प्राप्त हुए वे निन्नवत् हैं :

तालिका क्रमांक–1

साक्षी के साथ पुलिस का व्यवहार

क्र.	**अभिमत**	**संख्या**	**प्रतिशत**
1	साक्षी की खातिरदारी करते हैं	54	9.00
2	सभ्य व्यवहार करते हैं	96	16.00
3	असभ्य व्यवहार करते है	64	10.67
4	बार–बार बुलाते हैं	181	30.17
5	परेशान करते हैं	201	33.50
6	उत्तर अप्राप्त	04	0.66
	योग	**600**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि एक तिहाई 33.50 प्रतिशत (201) न्यादर्श यह स्पष्ट मत व्यक्त करते हैं कि साक्षी को साक्ष्य में नाम लिखाने पर पुलिस द्वारा अनेक प्रकार से परेशान किया जाता है। मसलन थाने पर बुलाया जाता है फिर दरोगा जी या दीवान जी के आने तक बैठने के लिए कहा जाता है। साक्षी अपना काम छोड़कर सारे-सारे दिन परेशान होता रहता है। तब उसे यह पश्चाताप होता है कि कहां वह साक्ष्य देने हेतु तैयार हो गया। लगभग इतने ही 30.17 प्रतिशत (181) चयनित न्यादर्श यह मत व्यक्त करते हैं कि साक्षी के बयान एक ही बार में नहीं लिए जाते उसे बार-बार बुलाया जाता है। घटनास्थल पर बयान लेने के बाद भी थाने पर बुलाया जाता है। फिर न्यायालय में गवाह के बयान एक बार में नहीं लिए जाते। कई बार तारीखें बढ़ती रही हैं और साक्षी न्यायालय के चक्कर लगाता रहता है। ऐसी स्थिति में उसे न केवल कठिनाई आती है अपितु काम का नुकसान भी होता है। 16 प्रतिशत (96) उत्तरदाता (न्यादर्श) यह स्पष्ट मत व्यक्त करते हैं। पुलिस का साक्षी के साथ व्यवहार सभ्य रहता है। 9 प्रतिशत (54) न्यादर्श कहते हैं कि पुलिस साक्षी की खूब खातिरदारी करती है। वहीं 10.67 प्रतिशत (64) न्यादर्श स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि पुलिस साक्षी के साथ असभ्यता से पेश आती है और कई बार तो साक्षी यह सोचने को विवश हो जाता है कि वह साक्षी है या मुलजिम।

अतः स्पष्ट है कि 74.34 अर्थात् तीन चौथाई न्यादर्श यह स्पष्ट मत व्यक्त करते हैं कि गवाह या साक्षी के साथ पुलिस का व्यवहार अच्छा नहीं होता या सहयोगात्मक नहीं होता, इसी कारण पुलिस को गवाह मिलने में कठिनाई आती है। पुलिस को न्यायालय में इसी कारण हार का मुंह देखना पड़ता है कि उसके गवाह कमजोर होते हैं। न्यायालय की संपूर्ण कार्यवाही गवाहों पर निर्भर करती है और उपरोक्त व्यवहार के कारण पुलिस को गवाह नहीं मिलते तथा वह काल्पनिक या मिथ्या गवाह (पेशेवर) के आधार पर प्रकरण न्यायालय में दायर करते हैं। जो न्यायालय में सूक्ष्म परीक्षण के दौरान असत्य सिद्ध हो जाते हैं फलतः अपराधी संदेह का लाभ पाकर छूट जाता है और पुनः समाज को क्षति पहुंचाने लगता है।

गवाह के बयान घटनास्थल पर लिए जाने चाहिए किंतु ऐसा नहीं होता। गवाह को बयान देने के लिए कहीं थाने पर बुलाया जाता है तो कभी सरपंच या गांव के

तालिका क्रमांक –2

गवाह के बयान कहाँ लिए जाते हैं

क्र.	**अभिमत**	**संख्या**	**प्रतिशत**
1	घटना स्थल पर	137	22.83
2	पुलिस थाने पर	258	43.00
3	गवाह के घर पर	20	03.33
4	गवाह को जहां सुविधा हो	46	07.67
5	पुलिस को जहां सुविधा हो	130	21.67
6	उत्तर अप्राप्त	09	01.50
	योग	**600**	**100.00**

अन्य किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के दरवाजे पर। जहां पर पुलिस कर्मी/अधिकारी आराम से बैठकर अपनी कार्रवाई संपन्न कर सके। इसमें साक्षी को न केवल संकोच होता है अपितु कठिनाई भी होती है। साक्षी खुलकर बयान नहीं दे पाता। कई बार साक्षी के घटनास्थल पर बयान ले लिए जाते हैं फिर भी उसकी पुष्टि हेतु उसे थाने पर या अन्य स्थान पर बुलाया जाता है। इससे साक्षी के समय व धन आदि का व्यर्थ नुकसान होता है। इससे पुलिस की परेशानियां ही बढ़ती हैं। कारण यह है कि यदि एक साक्षी परेशान होता है तो अगली घटना घटित होने पर सब कुछ ज्ञात होने पर भी वह या उससे जुड़ा हुआ कोई भी व्यक्ति साक्ष्य देने के लिए पुलिस के पास नहीं आता और तब पुलिस को अपनी कार्रवाई पेशेवर गवाहों के माध्यम से आगे बढ़ानी पड़ती हैं जो न्यायालय में कूट परीक्षण के दौरान खरे नहीं उतरते।

उपरोक्त तालिका का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 43 प्रतिशत (258) चयनित न्यादर्शों का कहना है कि साक्षी के बयान थाने पर लिए जाते हैं या साक्षी को थाने पर बुलाया जाता है। 22.83 प्रतिशत (137) न्यादर्श यह मत व्यक्त करते हैं कि बयान घटनास्थल पर लिए जाते हैं। 21.67 प्रतिशत (130) न्यादर्श यह मत व्यक्त करते हैं कि गवाह के बयान वहां लिए जाते हैं जहां पुलिस को सुविधा हो। इसमें गवाह की सुविधा/असुविधा का ध्यान नहीं रखा जाता। 7.67 प्रतिशत (46) न्यादर्शों का मत है कि गवाह के बयान वहां लिए जाते हैं जहां गवाह को सुविधा हो। मात्र 3.33 प्रतिशत (20) न्यादर्श मत व्यक्त करते हैं कि गवाह के बयान गवाह के घर पर लिए जाते हैं।

अतः स्पष्ट है कि जहां एक तिहाई 33.83 प्रतिशत साक्षियों के बयान घटना स्थल पर, गवाह के घर या गवाह को जहां सुविधा हो वहां पर लिए जाते हैं वहीं 64.67 प्रतिशत अर्थात् दो तिहाई गवाहों के बयान देने के लिए थाने पर बुलाया जाता है या सरपंच/पटेल या अन्य ऐसे स्थान पर जहां पुलिस को सुविधा हो बयान देने के लिए बुलाया जाता है।

गवाह पर पुलिस की निर्भरता आज भी बनी हुई है। 'पुलिस के समक्ष दिया गया बयान कानून में ग्राह्य नहीं है।' अतः जो बयान गवाह ने पुलिस के समक्ष दिया है उसी को न्यायालय में दोहराना जरूरी है। साक्ष्य अधिनियम जो अंग्रेजों के समय बनाया गया था उसमें अद्यतन कोई परिवर्तन व संशोधन नहीं किया गया है। अतः गवाह के न्यायालय में मुकर जाने पर पुलिस के लिए कठिनाई आ जाती है।

यदि कोई गवाह न्यायालय में अपने बयान बदलता है या पक्षद्रोही होता है तो गवाह को दंडित करने का प्रावधान होना चाहिए। कारण यह कि चश्मदीद गवाह को भी पक्षद्रोही होते देखा गया है। माघव महाविद्यालय, उज्जैन में घटित घटना के समस्त चश्मदीद गवाह व अन्य गवाह पक्षद्रोही हो गए यहां तक कि जिन पुलिस कर्मियों के नाम गवाह की सूची में थे वे भी न्यायालय में जाकर पक्षद्रोही हो गए। अतः पक्षद्रोही होने वाले गवाहों को दंडित किए जाने का प्रावधान होना जरूरी है। अपराधी का न्यायालय से छूटने का कारण ही गवाह का अपने बयान से मुकर जाना (पक्षद्रोही हो जाना) होता है।

पुलिस अधिनियम 1861 में बना। इसी के अनुरूप पुलिस द्वारा कार्रवाई की जाती है। लंबे समय से इसकी प्रासंगिकता के ऊपर प्रश्न उठते रहे हैं। किंतु इसमें बदलाव नहीं किया गया। अब जब पुलिस अधिनियम 1861 में परिवर्तन की बात चल रही है तब इसकी समिति में पुलिस अधिकारियों को नहीं रखा गया है। पुलिस अधिनियम बने और उसमें पुलिस के किसी अधिकारी डी. जी. पी. या ए. डी. जी. पी. स्तर के अधिकारी को भी एक सदस्य के रूप में भी न रखा जाए या इनको दूर रखकर अधिनियम बनाया जाए कितनी विसंगति है। फिर उस अधिनियम में कितनी सार्थकता होगी यह

तालिका क्रमांक–3

गवाह की पुलिस से अपेक्षाएं

क्र.	अपेक्षाएं	संख्या	प्रतिशत
1	सज्जनता से पेश आए	166	27.67
2	बयान लेकर उसे मुफ्त कर दिया जाए	196	32.67
3	यथा–समय भत्ता मिले	30	05.00
4	बार–बार न बुलाया जाए	199	33.16
5	उत्तर अप्राप्त	09	01.50
	योग	**600**	**100.00**

विचारणीय बिंदु है।

यह ठीक उसी प्रकार है जिस प्रकार पूर्वांचल राज्यों के अंतर्गत चीन सीमा से जुड़े उस भू–क्षेत्र जिस पर भारतीय सेना काबिज है और उस पर चीन अपना अधिकार सेंपल सर्वे ऑफ इंडिया द्वारा गलत जानकारी के आधार पर बनाए गए मैप के आधार पर दर्शा रहा है उसके निराकरण के लिए समिति बनाई गई किंतु उस समिति में सेना के ऐसे एक भी अधिकारी को नहीं रखा गया जिनको उस क्षेत्र के चप्पे–चप्पे की जानकारी है। समिति में ऐसे लोग रखे गए हैं जो उस क्षेत्र से या तो परिचित ही नहीं है या उस भू–भाग का सामरिक महत्व नहीं समझते। सर्वे ऑफ इंडिया भी अपनी गलती का सुधार करने को तैयार नहीं है। यही स्थिति पुलिस अधिनियम के संबंध में बनी है।

आज समाज के सभी वर्गों की पुलिस से अनेक अपेक्षाएं हैं। पुलिस अपने पुराने 1861 के अधिनियम के तहत ही जहां तक संभव होता है समाज की अपेक्षाओं को पूरा करने का प्रयास करती है। गवाह की भी पुलिस से कुछ अपेक्षाएं होती हैं। इस सर्वेक्षण में यह जानने का प्रयास किया गया कि गवाह की पुलिस से क्या अपेक्षाएं हैं? प्राप्त तथ्य उपरोक्त तालिका में दर्शित हैं :–

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक गवाहों की पुलिस से अपेक्षा यह है कि उन्हें बार–बार न बुलाया जाए। इससे न केवल उनका व्यर्थ में समय नष्ट होता है अपितु मानसिक कष्ट भी होता है। 33.16 प्रतिशत (199) न्यादर्श मानते हैं कि गवाह की पुलिस से अपेक्षा है कि उसे बार–बार न बुलाया जाए। लगभग इतने ही 32.67 प्रतिशत (196) न्यादर्शों का मत है कि गवाह चाहता है कि उसे जल्द से जल्द बयान लेकर मुफ्त कर दिया जाए ताकि उसका समय व्यर्थ में नष्ट न हो। 27.67 प्रतिशत (166) न्यादर्शों का मत है कि गवाह की पुलिस से अपेक्षा रहती है कि पुलिस उसके साथ सज्जनता से पेश आए, दुर्व्यवहार न करे। मात्र 5 प्रतिशत (30) न्यादर्श मत व्यक्त करते हैं कि गवाह की पुलिस से अपेक्षा है उसे यथा–समय भत्ता मिले।

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकलता है कि 93.5 प्रतिशत न्यादर्शों का स्पष्ट मत है कि गवाह की पुलिस से अपेक्षा है कि उसके साथ सज्जनता से पेश आया जाए, उसके बयान लेकर उसे शीघ्र मुक्त कर दिया जाए तथा उसे बार–बार न बुलाया जाए। यदि इतना ध्यान रखा जाए तो पुलिस को गवाह मिलने में कठिनाई नहीं आएगी। पुलिस द्वारा गवाह की सुविधा व सुरक्षा का ध्यान रखा जाए तो पुलिस को गवाह न मिलने संबंधी

समस्या समाप्त हो सकती है।

दुष्चरित्र व्यक्ति या अपराधियों के साथ पुलिस का व्यवहार :

दुष्चरित्र व्यक्ति कौन ? दुष्चरित्र व्यक्ति से अभिप्राय ऐसे व्यक्ति से है जो एक या एक से अधिक बार कानून का उल्लंघन करके आरापों या सजाओं को भुगत चुका हो। साक्षी को छोड़कर समस्त गिरफ्तार व्यक्ति दुष्चरित्र व्यक्ति की श्रेणी में आ जाते हैं। इसमें किशोर, महिला तथा प्रौढ़ तीनों प्रकार के व्यक्ति शामिल हैं। दंड संहिता की धारा 356 की परिधि में आने वाले समस्त व्यक्ति तथा ऐसे सजा प्राप्त अपराधी जिन्हें सजा की अवधि समाप्त होने से एक माह पूर्व जेल अधीक्षक उनके संबंधित जिले की जेल में स्थानांतरित करता है, दुष्चरित्र व्यक्ति की श्रेणी में आते हैं। हिस्ट्रीशीटर व्यक्ति दुष्चरित्र व्यक्ति की श्रेणी में आता है। धारा 432 (1-6) के अंतर्गत छोड़े गए हिस्ट्रीशीटर जिनकी निगरानी रखी जाती है दुष्चरित्र व्यक्ति की परिधि में आते हैं। चोरी का माल खरीदने वाले, संपत्ति संबंधी अपराध करने वाले या तस्करी में संलग्न व्यक्ति इस श्रेणी में आते हैं। धारा 109 तथा 110 के अंतर्गत आने वाले सभी अपराधी दुष्चरित्र व्यक्ति की श्रेणी में आते हैं।

अपराध या दुष्चरित्रता के अनेक कारण हो सकते हैं। दुराचरण का कोई एक सर्वमान्य कारण नहीं है। यथा विषम परिस्थितियां, आर्थिक विपन्नता एवं विषमता, अशिक्षा एवं अज्ञानता, जनसंख्या की अधिकता, सामाजिक एवं आर्थिक भिन्नता, शीघ्र धनी बनने की चाह आदि अपराध का कारण बनते हैं।

ग्वालियर नगर में गोविंदपुरी (वि. वि. थाना क्षेत्र) में पड़ी डकैती के मुलजिमों से जब पूछा गया कि उन्होंने यह अपराध क्यों किया तो अपराध के मास्टर माइंड घर के नौकर बबलू ने बताया कि वह शीघ्र धनी बनना चाहता था इसी लालच में उसने यह अपराध किया।

जेबकटी, चोरी, रेलगाड़ी से अटैची पार करना, यात्रियों के साथ जहरखुरानी कर या उन्हें बेहोश करके उनका पैसा लूटना, महिलाओं के गले से चैन, मंगलसूत्र खींचना, व्यापारियों को लूटना, बैंक पर खड़े होकर अधिक रकम निकालने वालों पर नजर रखना तथा बैंक से निकलने पर उन्हें लूट लेना, ए.टी.एम. मशीन से छेड़छाड़ कर पैसा निकालना, वाहन चोरी करना, बच्चों का अपहरण कर फिरौती के लिए उनके माता-पिता पर दबाव डालना, किशोरियों को बहला फुसलाकर ले जाना तथा बेच देना, चोरी का माल खरीदना, चोरों या अन्य अपराधियों को प्रश्रय देना आदि अनेक प्रकार के अपराध देखने को मिलते हैं। ये सभी अपराध ग्वालियर नगर में आए दिन घटित हो रहे हैं और इनको अंजाम देने वाले अपराधी हमारे आस-पास ही घूमते रहते हैं। सहज में हम उनको नहीं पहचानते या उनकी ओर ध्यान नहीं देते। यदि सावधान रहा जाए और इनकी गतिविधियों से पुलिस को अवगत करा दिया जाए तो ये सहज ही पकड़े जा सकते हैं। किंतु नगर की व्यस्त दिनचर्या में कोई इनकी ओर ध्यान नहीं देता इसी कारण नगर में अपराध बढ़ रहे हैं तथा जन-जीवन असुरक्षित होता जा रहा है।

अपराधियों के साथ पुलिस का व्यवहार कैसा हो? यह विचारणीय बिंदु है। विभिन्न न्यायालयों की पुलिस के संबंध में की गई टिप्पणियों पर यदि दृष्टिपात करें तो स्थिति बहुत अच्छी नजर नहीं आती। अपराधियों को पेशी पर ले जाते समय आरक्षक अपराधियों की सुख-सुविधाओं का विशेष ध्यान रखते हैं। जिससे जनता पुलिस पर व्यंग्य करने से नहीं चूकती कि ये सरकारी मेहमान को ले जा रहे हैं। आरक्षक थोड़े से लाभ के लिए पुलिस की छवि दांव पर लगा देते हैं। जनमानस में इससे पुलिस के प्रति घृणा उत्पन्न होती है। पुलिस अपराध रोकने एवं अपराधों पर नियंत्रण स्थापित करने के लिए है। किंतु कई बार स्वयं पुलिसकर्मी व अधिकारी अपराधों और गंभीर अपराधों में लिप्त हो जाते हैं। एस. पी. भिंड को उप निरीक्षक चेतना शर्मा हत्याकांड में संदेह के घेरे

में लिया जा रहा है। हत्या, हत्या के प्रयास, डकैती तथा बलात्कार जैसे मामलों में पुलिसकर्मियों/अधिकारियों का लिप्त पाया जाना तथा उनके विरुद्ध आपराधिक प्रकरण दर्ज होना पुलिस व्यवस्था पर प्रश्न चिह्न लगाता है। वर्ष 2006 में म. प्र. में लगभग 125 पुलिसकर्मियों/ अधिकारियों के विरुद्ध गंभीर आपराधिक प्रकरण दर्ज किए गए। 1 दिसंबर 2005 से 31 जनवरी 2007 तक के 14 माह के दौरान 128 पुलिस कर्मियों / अधिकारियों के विरुद्ध म. प्र. में आपराधिक प्रकरण दर्ज किए गए। सर्वाधिक आपराधिक प्रकरण ग्वालियर जिले में 08 पुलिसवालों के विरुद्ध दर्ज किए गए, दतिया में 05, भोपाल में 04, जबलपुर व नरसिंहपुर में 3–3 तथा शिवपुरी, श्योपुर, अशोकनगर, खंडवा, हरदा, इंदौर आदि जिलों में 2–2 पुलिस वालों के विरुद्ध आपराधिक मामले दर्ज किए गए। चेतना शर्मा उपनिरीक्षक भिंड की हत्या जिस स्थिति में उनके निवास पर हुई उसमें तत्कालीन एस. पी. को संदेह के दायरे में लिया जा रहा है। तत्कालीन पुलिस निरीक्षक को भी सी.बी.आई. ने जांच के घेरे में लिया है। पुलिसकर्मियों / अधिकारियों का इस प्रकार आपराधिक मामलों में लिप्त होना चिंता का विषय है।

न्यायालय की टिप्पणी कि इस बात का अध्ययन तो किया जाता रहा है कि पुलिस की तत्परता से कितने अपराधों पर नियंत्रण लगाया गया किंतु आज इस तथ्य का अध्ययन होना भी जरूरी है कि कितने सामान्य जन पुलिस की ज्यादती से तंग आकर आदतन अपराधी बने। अर्थात् पुलिस ने कितने नए अपराधी पैदा किए। विचारणीय बिंदु है। चंबल के कुख्यात डाकू जगजीवन परिहार गिरोह का अंत 14 घंटे चली साहसिक मुठभेड़ के दौरान 15 मार्च 2007 को किया गया। प्रश्न यह है कि जगजीवन परिहार इतना सशक्त डकैत बना कैसे। पुलिस से सतत् संपर्क। पुलिस के साथ उठना, बैठना, गूजर गिरोहों का अंत करने के लिए पुलिस के साथ मिलजुलकर मुठभेड़ों में भाग लेना तथा गोली चलाना, गांव में एक ब्राह्मण की हत्या के बाद भी नामजद रिपोर्ट होने पर भी पुलिस की गाड़ियों में डकैत आपरेशन के लिए घूमना आदि उसका लंबे समय तक चला। फिर एक साथ 11 ग्रामीणों को जलाकर गांव में मार डालना और डकैत बन जाना, फरार हो जाना। 75 आदमियों का संगठित गिरोह तैयार कर लेना आदि सब जगजीवन पुलिस के संपर्क के कारण बढ़े हुए मनोबल के कारण ही कर पाया। यदि पुलिस उसे पहली हत्या के जुर्म में ही गिरफ्तार कर लेती तो वह इतना दुर्दांत डकैत न बन पाता और तब शायद उसके तीनों बच्चे सत्यम 10, शिवम् 08 तथा सुंदरम् 06 यतीम न हुए होते। निरीक्षक श्री वीरेंद्र सिंह भदौरिया शहीद न हुए होते, उनका परिवार लावारिस न हुआ होता, निरीक्षक श्री के. डी. सोनकिया को अपनी आंख न गवानी पड़ती और जाबांज सिपाही घायल न हुए होते। डकैत छोटे सिंह, डकैत सरूसिंह, डकैत पंचम सिंह भी अतीत में पुलिस ज्यादतियों के शिकार हो चुके हैं। अपराधियों के साथ सख्त व्यवहार किया जाए किंतु ध्यान रखा जाए इस बीच कोई ऐसा व्यवहार न हो कि नया अपराधी पुलिस के कारण पैदा हो जाए।

ग्वालियर नगर में घट रहे अपराधों पर नियंत्रण पाने के लिए पुलिस द्वारा जब किसी एक अपराधी को पकड़ा जाता है तो अपनी सफलता बताने तथा लंबित मामले कम करने के लिए एवं वाहवाही लूटने के लिए उस पर उसी प्रकार के अनेक अपराध लाद दिए जाते हैं जो उसने किए ही नहीं होते। वस्तुतः इसका एक बड़ा नुकसान यह होता है कि वास्तविक अपराधी स्वतंत्र घूमते रहते हैं तथा नगर में नित नए अपराध घटित होते रहते हैं। अपराधों का सिलसिला थमता नजर नहीं आता। ग्वालियर में अनेक पी.सी.आर. वैन तैनात की गई किंतु इनके खाते में भी सफलता की घटनाएं नगण्य ही है।

युग परिवर्तन हुआ। समाज में गतिशीलता बढ़ी। यातायात संचार के साधनों में बेतहाशा वृद्धि हुई। जनसंख्या

बढ़ी। भौतिकवाद बढ़ा। अपराध भी बढ़े। अपराधियों ने यातायात व संचार के आधुनिक साधनों का लाभ लेकर अपराध करके कानून से बचने का तरीका अपनाया। पुलिस की परेशानियां बढ़ीं एक अपराधी मोबाइल से अपने दूसरे साथियों को अपनी लोकेशन देता है। अपराध का प्लान बनाता है। उसके साथ मोबाइल से सतत् संपर्क में रहकर बाइक या कार से पहुंचते हैं अपराध को अंजाम देते हैं तथा अपराध घटित कर उसी द्रुतगामी यातायात के साधन बाइक / कार से घटनास्थल से बहुत दूर निकल जाते हैं। पुलिस उन्हें स्थानीय स्तर पर तलाशती है। पुराने अपराधियों को या इस प्रकार के अन्य लोगों को टटोलती है, किंतु सफलता नहीं मिलती। चोरी की अधिकांश वारदातें इसी प्रकार होने लगी हैं तथा चोर अब दूर-दूर चोरियां करने लगे हैं। पुलिस स्थानीय चोरों को पकड़ कर चोरी के बारे में पूछती है जबकि वस्तुतः उनका हाथ उस चोरी में नहीं होता। इसी कारण न तो चोर पकड़ में आते हैं और न ही माल बरामदगी होती है। पुलिस पर ऊपर से दबाव आता है। वह स्थानीय चोरों को हवालात में बंद कर उनके खिलाफ मुकदमा कायम कर देती है। यद्यपि ग्वालियर नगर के वि. वि. थाना क्षेत्र में सितंबर 2006 में घटी डकैती की घटना (गोविंदपुरी कालोनी) का पुलिस ने तत्परता से पता कर न केवल अपराधियों को गिरफ्तार करने में सफलता हासिल की वरन् माल भी बरामद कर लिया। यहां संबंधित पुलिस अधिकारियों व कर्मचारियों के बुद्धिमता व कुशलता काबिले तारीफ है। जिस तत्परता से उन्होंने घटना क्रम का विवेचन कर घर के नौकर तथा पड़ोस के घर के नौकर को कब्जे में लिया एवं पूछताछ की उससे संपूर्ण घटना का पर्दाफाश हो गया। यद्यपि अपराधी, अपराध करके शीघ्र ही ग्वालियर से निकल कर अपने गांव खनियांधाना जिला–शिवपुरी पहुंच चुके थे।

तालिका क्रमांक–4

अपराधियों के साथ पुलिस का व्यवहार कैसा होना चाहिए

क्र.	**अपेक्षित व्यवहार**	**संख्या**	**प्रतिशत**
1	चेतावनी देकर छोड़ देना चाहिए	121	20.17
2	खूब मारपीट करनी चाहिए	51	08.50
3	कठोर यातना देनी चाहिए	92	15.33
4	न्यायालय के सुपुर्द कर देना चाहिए	326	54.33
5	उत्तर अप्राप्त	10	01.67
	योग	**600**	**100.00**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वाधिक 54.33 प्रतिशत न्यादर्श यह स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि अपराधी को गिरफ्तार कर उसके विरूद्ध चार्टशीट तैयार करके उसे न्यायालय के सुपुर्द कर देना चाहिए। दंड देने का कार्य न्यायालय का है पुलिस का नहीं। 15.33 प्रतिशत न्यादर्श यह मत व्यक्त करते हैं कि अपराधी को कठोर यातना देनी चाहिए। न्यायालय से अधिकांश अपराधी साक्ष्य के अभाव में छूट जाते हैं या जेल भी अब यातना केंद्र न होकर सुधारगृह बन गए हैं जहां अपराधियों की सुख–सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाता है। अपराधी स्वयं धन व बाहुबल से जेल में पूरी सुविधा हासिल कर अपना राज कायम कर लेते हैं। अतः पुलिस द्वारा प्रारंभ में ही उसे कठोर दंड / यातना

देनी चाहिए ताकि वह अपराध करने से डरे। 8.50 प्रतिशत न्यादर्श यह अभिमत व्यक्त करते हैं कि अपराधी की खूब मारपीट की जानी चाहिए। जब से मानवअधिकार आयोग या अन्य इस प्रकार के आयोग बने हैं व राजनैतिक हस्तक्षेप बढ़ा है पुलिस अपराधियों के साथ सख्त व्यवहार अपनाने या मारपीट करने से बचने लगी है। इससे अपराधियों का मनोबल बढ़ा है। अपराध की घटनाएं बढ़ी है तथा पुलिस का प्रभाव व कानून का भय कम हुआ हैं। अतः न्यादर्शों का मत है कि अपराधियों की खूब मारपीट की जानी चाहिए ताकि वे अपराध करने से बचे। 20.17 प्रतिशत न्यादर्श यह स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि प्रथम अपराधी, साधारण अपराधी या इसी किस्म के अन्य छोटे–छोटे अपराधों में अपराधियों को चेतावनी देकर थाना स्तर पर ही छोड़ देना चाहिए। क्योंकि जेलों में पहुंचकर यह अन्य अपराधियों के संपर्क में आते हैं और अभ्यस्त अपराधी बन जाते हैं। जेल से कोई व्यक्ति सुधरकर बाहर निकला हो ऐसा उदाहरण अपवाद स्वरूप ही देखने को मिलेगा। ऐसे अनेक अपराधी हैं जो साधारण अपराध में जेल में बंद हुए और वहां दूसरे अपराधियों के संपर्क में आकर वे गंभीर व अभ्यस्त अपराधी बन गए। संगठित गिरोह उन्होंने खड़ा किया। अतः साधारण अपराधियों को चेतावनी देकर छोड़ देना चाहिए।

जेल में अब कैदियों की संख्या क्षमता से अधिक बढ़ रही है। अतः अब दो प्रकार के जेलों की आवश्यकता है। पहले प्रकार में वह जेल हों जहां केवल जघन्य अपराध करने वाले एवं पेशेवर व प्रभुता संपन्न (धनबल व बाहुबल) कैदियों को रखा जाए। दूसरी प्रकार की वह जेल हों जहां प्रथम अपराधी या साधारण अपराध करने वाले अपराधियों को रखा जाए। ऐसे कैदी जो आजीवन कारावास की सजा काट रहे हैं और जिनका आचरण बहुत अच्छा रहा है तथा आधी से अधिक सजा काट चुके हैं इनके लिए खुली जेल एवं पुनर्वास केंद्रों की आवश्यकता है। खुली जेल में रहकर यह वहां के स्वतंत्र वातावरण में श्वास ले सकेंगे तथा जघन्य अपराधियों के जुल्मों से भी बच सकेंगे।

अतः यह स्पष्ट है कि जहां आधे से अधिक न्यादर्श, मानते हैं कि पुलिस को दंड देने का अधिकार नहीं है उसे मुलजिम को पकड़ कर न्यायालय के सुपुर्द कर देना चाहिए। वही लगभग एक चौथाई न्यादर्श यह स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि पुलिस अपराधियों को कठोर यातना दे, उनमें भय उत्पन्न करे तभी अपराधों पर अंकुश लग सकता है।

तालिका क्रमांक –5

पुलिस अपराधियों के साथ किस प्रकार का व्यवहार करती है

क्र.	अपेक्षित व्यवहार	संख्या	प्रतिशत
1	न्यायालय के सुपुर्द कर देती है	225	37.50
2	कठोर यातना देती है	143	23.83
3	अपराधियों को संरक्षण प्रदान करती है	39	06.50
4	अपराधियों से सद्व्यवहार करती है	106	17.67
5	तत्काल छोड़ देती है	78	13.00
6	उत्तर अप्राप्त	09	01.50
	योग	**600**	**100.00**

पुलिस को अपराधियों के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए तथा पुलिस यथार्थ में अपराधियों के साथ कैसा व्यवहार करती है यह दोनों पृथक तथ्य है। शोधार्थी द्वारा चयनित न्यादर्शों से इस संबंध में तथ्य संकलित किए गए कि पुलिस यथार्थ में अपराधियों के साथ कैसा व्यवहार करती है जो तथ्य प्राप्त हुए वे उपरोक्त तालिका में दर्शाए गए हैं।

उपरोक्त तालिका का अवलोकन करने पर स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक 37.50 प्रतिशत न्यादर्श यह स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि पुलिस अपराधियों को गिरफ्तार कर उन्हें कानूनी कार्रवाई हेतु न्यायालय के सुपुर्द कर देती है। 23.83 प्रतिशत न्यादर्श अभिमत व्यक्त करते हैं कि पुलिस अपराधियों को कठोर यातना देती है। पुलिस के यातना के तरीके वीभत्स हैं। इसी कारण कई बार पुलिस कस्टडी में मुलजिम की मौत हो जाती है और उसका खामियाजा पुलिस कर्मियों को भुगतना पड़ता है। 17.67 प्रतिशत न्यादर्श यह मत व्यक्त करते हैं कि जो अपराधी पहुंच वाले होते हैं या जो पैसा खर्च कर सकते हैं पुलिस उनके साथ सद्व्यवहार करती है। राजनैतिक संरक्षण प्राप्त जघन्य अपराधियों से भी पुलिस अपराधियों जैसा व्यवहार न करते हुए दोस्ताना लहजे में बात करती है। इसका संदेश जनमानस पर सकारात्मक नहीं पड़ता। 13.00 प्रतिशत न्यादर्श मत व्यक्त करते हैं कि पुलिस कई बार अपराधियों को पकड़कर तत्काल छोड़ देती है या जनता द्वारा अपराधी पकड़कर पुलिस को सौंपा जाता है तो पुलिस उसे थोड़ी देर बाद ही छोड़ देती है, इससे पुलिस की विश्वसनीयता पर प्रश्न चिन्ह लगता है। जनता में यह संदेश जाता है कि पुलिस अपराधियों में मिली हुई है। अभी हाल ही में इसी कारण कई ऐसे मामले प्रकाश में आए हैं जहां जनता ने अपराधियों को पकड़कर पीट-पीट कर मार डाला। यह उनका पुलिस तथा न्यायालय पर उठते विश्वास का प्रतीक है। अपराधी को पकड़ कर पुलिस को सुपुर्द करने के बजाय उन्होंने वहीं उसे इतना पीटा कि उसकी मृत्यु हो गई। बाद में पुलिस द्वारा संबंधितों के खिलाफ प्रकरण पंजीबद्ध किए गए। कई बार ट्रेन में, रेलवे स्टेशन, बस स्टैंड या बाजार में चोर या जेबकतरे को जनता पकड़कर पुलिस को सौंपती है पुलिस थोड़ी देर बाद यदि उसे छोड़ देती है तो पुलिस की विश्वसनीयता संदेह के घेरे में आ जाती है। 6.50 प्रतिशत ऐसे भी न्यादर्श हैं जो यह स्पष्ट अभिमत व्यक्त करते हैं कि पुलिस अपराधियों को संरक्षण प्रदान करती है। पुलिस के संरक्षण में गंभीर से गंभीर जघन्य व अभ्यस्त अपराधी पलते हैं। कई बार पुलिस एक अपराधी को पकड़ने के लिए दूसरे अपराधी का सहारा लेती है ऐसे में जनता को लगता है कि पुलिस अपराधी को संरक्षण दे रही है। स्थानीय स्तर पर कुछ पुलिसकर्मी अपराधियों से जुड़े रहते हैं। उन्हें विभाग की गतिविधियों, नीतियों या अन्य सूचनाएं पहुंचाते हैं वस्तुतः ये अपराधियों के मुखबिर होते हैं तथा विभाग के गद्दार। पता चलने पर विभाग द्वारा इनके विरुद्ध कार्रवाई भी की जाती है।

संक्षेप में पुलिस दुष्चरित्र या अपराधी के साथ कैसा व्यवहार करे इस पर चर्चा करना जरूरी है।

(1) अपराधी व्यक्ति भी समाज के ही सदस्य हैं तथा उसी के अंग हैं। इनकी गाड़ी गलत पटरी पर चली गई है यदि सही दिशा निर्देशन मिल जाता है तो यह सुधरकर सही तथा उपयोगी सदस्य बन सकते हैं। अतः पुलिस को उनके साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए जिससे उनको ईमानदारी एवं मेहनत से जीविका कमाने की प्रेरणा मिले।

(2) प्रत्येक व्यक्ति का अपना स्वाभिमान होता है फिर वह अपराधी ही क्यों न हो। अतः बुरी तरह सार्वजनिक स्थान पर दुत्कारना, गालियां देना, अपमानित करना या उत्पीड़न करने से साधारण अपराधी भी जघन्य अपराधी बन जाता है।

(3) अपराधी को गिरफ्तार करने के पश्चात पुलिस

को उसके विरुद्ध दृढ़तापूर्वक विधि सम्मत कार्रवाई करनी चाहिए। उसके विरूद्ध पर्याप्त साक्ष्य एकत्रित करने चाहिए बिना राजनैतिक दबाव में आए निष्पक्ष कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए जिससे न्यायालय में उसे अपने किए गए अपराध का दंड मिल सके।

(4) पुलिस को किसी भी अपराधी के साथ अमानवीय व्यवहार करने की अनुमति नहीं दी जा सकती, उत्तेजना या आवेश में आकर किसी भी मुलजिम के साथ अमानवीय या पशुवत व्यवहार करना सर्वथा अनुचित है।

(5) भारतीय दंड विधान की धारा 356 (1–6) के तहत कतिपय अधिकारियों की निगरानी खोली जाती है। इनकी सक्रिय निगरानी की व्यवस्था होना चाहिए निगरानी सख्ती से की जाए औपचारिक निगरानी औचित्यहीन है। आरक्षक वर्ग निगरानी करने में ईमानदारी नहीं बरतते। उसे गंभीरता से नहीं लेते। यह प्रवृत्ति गलत है। निगरानी इस प्रकार की जाए कि निगरानीशुदा व्यक्ति को भी किसी किस्म की अड़चन न हो। निगरानी करने का अर्थ बार–बार अपमानित करना नहीं है। बल्कि उसे यह अनुभूति कराना है कि पुलिस अब उसे अपराध नहीं करने देगी।

(6) अपराधी को सकारात्मक शिक्षा देने की आवश्यकता है।

अतः स्पष्ट है कि पुलिस के बारे में लोगों की अलग–अलग धारणाएं हैं। 61 प्रतिशत न्यादर्शों की धारणाएं पुलिस के अनुकूल नहीं है। इनके अनुसार पुलिस समाज के प्रत्येक वर्ग से उसके अनुरूप वांछित एवं अपेक्षित व्यवहार नहीं करती है। पुलिस की भाषा, बोली, लहजा आदि भी सामान्यजन को बहुत अच्छा नहीं लगता। अपराधियों के साथ दोस्ताना व्यवहार तथा साक्षियों एवं सामान्यजन के साथ अपराधियों जैसा व्यवहार लोगों को कष्टप्रद लगता है। इसमें बदलाव की आवश्यकता है किंतु आवश्यक वर्ग इस तथ्य की महत्ता को नहीं समझ रहे हैं। मानव व्यवहार की शिक्षा के बाद भी उनके आचरण में बहुत बदलाव दिखलाई नहीं देता। आरक्षक, प्रधान आरक्षक एवं उपनिरीक्षक स्तर के पुलिस कर्मी अहं के शिकार हैं। इनके पास भाषा का अभाव तो है ही अहं तथा कुंठा के कारण इनका व्यवहार सामान्य जन के साथ अच्छा नहीं रह पाता यदि इसमें कुछ परिवर्तन होता है तो पुलिस की छवि में तो सुधार होगा ही पुलिस को जन सहयोग भी मिलने लगेगा और अपराधों पर नियंत्रण भी लगना संभव होगा।

❐

अपराधियों के लिए सैल्यूलर नेट (जाल)

प्रवीण मंडलोई
उप. पुलिस अधीक्षक (रेडियो)
एफ-5/6, चार इमली, भोपाल, म.प्र.

वर्तमान युग को यदि हम आधुनिकतम संचार का युग कहें तो शायद ही किसी को कोई अचरज हो, हम सभी भाग्यशाली हैं जो हमने तकनीकी संचार युग के इस सबसे बड़े महापरिवर्तन को अपनी आंखों से देखा है। C.O.A.I. (Cellular Operator Association of India) के द्वारा प्रदर्शित आकंड़ो में हम भारतवासी सैल्यूलर फोन के उपयोग में एशिया में प्रथम है।

वर्तमान समय में हम Cellular Mobile Technology के दो रूपों से वाकिफ है GSM (Global System for Mobile Communication) और CDMA (Code Division Multiple Access) दोनों ही तकनीकों में GSM Cellular Mobile तकनीक सबसे ज्यादा लोकप्रिय एवं विस्तृत है। लोगों के साथ-साथ अपराधियों के द्वारा भी इसी Cellular Mobile Network का उपयोग अपराध घटित करते समय किया जा रहा है, विगत वर्षों में पुलिस अनुसंधान में साक्ष्य के रूप में Cellular Mobile Network का भरपूर उपयोग कर हत्या, अपहरण, लूट, डकैती इत्यादि के मामलों में पुलिस ने उल्लेखनीय सफलता दर्ज की है।

पुलिस अन्वेषण में यह, अपराधियों को पहचानने, पकड़ने और उनकी गतिविधियों पर नजर रखने कि दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं सुलभ साधन है इसलिए यह आवश्यक हो गया है कि हम इस Cellular Mobile Network की बारीकियों को जानकर पुलिस अन्वेषण की प्रक्रिया में इसका हर संभव फायदा उठाए–

मुख्य रूप से यदि देखा जाए तो Cellular Mobile Network, Forensic Evidence का वृहद खजाना है, जिसमें से हम हमारे उपयोग के हर संभव साक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर सकते हैं और पुलिस अन्वेषण के महत्वपूर्ण पहलुओं को सशक्त बनाकर इसे और प्रभावी बना सकते हैं।

मुख्य अन्वेषण की दृष्टि से Cellular Mobile Network में उपलब्ध साक्ष्य इस प्रकार से हैं—

Evidence Availability in Cellular Network

Evidence Availability in S.I.M.

Evidence Availability in MOBILE HAND SET

Core cellular Network

Core Network, पुलिस अन्वेषण कि दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण है इसमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण है Call Records का Database जिसमें Cellular Network में हुई प्रत्येक Call की जानकारी रहती है। पुलिस अन्वेषण की दृष्टि से Core Cellular Network में उपलब्ध साक्ष्यों को तीन भागों में बांटा जा सकता है

I. Subscriber Database

Network Service Provider अपने सभी Subscribers का एक विस्तृत Database रखता है जिसके अंतर्गत निम्न जानकारियां निहित रहती हैं

. Subscriber name and address

. Billing name and address

. Telephone Number (MSISDN)

. IMSI

. SIM Serial Number

. PIN/PUK For the SIM

. Services Allowed (like CUG-Close User Group)

Subscriber Database से जुड़ी उपरोक्त सभी

जानकारियां पुलिस अन्वेषण को और अधिक केंद्रित करती है

II. Call Data Records

Cellular Network के हृदय MSC-Main Switching Center के द्वारा नेटर्वक में होने वाले प्रत्येक Call और प्रत्येक SMS का Detailed Record रखा जाता है जो Billing हेतु उपयोग किया जाता है सामान्य Call Detail Record में निम्नांकित जानकारियां उपलब्ध रहती हैं–

Originating MSISDN

Terminating MSISDN

Originating and Terminating IMEI

Length of Call

Type of Call

Type of service

Initial Serving Base Station (BTS)

Call Detail Records को उपरोक्त जानकारियों के आधार पर और विस्तृत किया जा सकता है इसकी सहायता से किसी भी SIM कार्ड से किए गए Calls एवं प्राप्त किए गए Calls, SMS इत्यादि की विस्तृत जानकारी, और तो और सामने वाले व्यक्ति के Mobile Phone की जानकारी भी हासिल की जा सकती है चाहे उसने किसी दूसरे Network Service Provider के ही SIM कार्ड का उपयोग क्यों ना किया हो। Serving Base Transreceiver Station के आधार पर यह ज्ञात किया जा सकता है कि वर्तमान में वह किस 250 Meter (लगभग) के दायरे में विद्यमान है। इस तरह की जानकारियां ना केवल पुलिस अन्वेषण कि दृष्टि से महत्वपूर्ण है अपितु यह रोजमर्रा कि पुलिस की कार्रवाई में भी अतिमहत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

III. Subscriber Location Information

वैसे तो Subscriber जैसे ही अपना मोबाइल ऑन करता है तो वैसे ही उसके Location Area की जानकारी Network Service Provider के HLR (Home Location Register) में स्टोर हो जाती है यह Location Area की जानकारी इतनी काफी नहीं होती है कि इससे किसी भी Subscriber की स्थिति का निश्चित निर्धारण किया जा सके, लेकिन GSM Phase II और Phase II + में Location Based Services का उपयोग होने से अब यह समस्या ज्यादा दिन तक विद्यमान नहीं रहेगी।

S.I.M. SIM कार्ड एक स्मार्ट कार्ड है जिसके अंतर्गत एक Processor और एक Non Volatile Memory होती है GSM Cellular Mobile Technology में SIM कार्ड का उपयोग Mobile Subscriber से संबंधित DATA को Store करने में किया जाता है। सामान्यत: Network Provider का नाम SIM कार्ड पर ही उपलब्ध रहता है, SIM कार्ड में एक यूनिक Subscriber Identification Number होता है जिसका उपयोग Network service Provider से संबंधित Mobile Subscriber की जानकारी जैसे Subscriber का नाम, उसका पता, फोन नंबर, Email Address इत्यादि के लिए किया जा सकता है जो पुलिस अन्वेषण कि दृष्टि से अतिमहत्वपूर्ण है। SIM कार्ड को Access करने के लिए एक यूनीक नंबर PIN (Personal Identification Number) कि आवश्यकता होती है जो 4 digit का रहता है और जिसे Subscriber द्वारा निर्धारित किया जा सकता है यदि किसी के द्वारा तीन बार PIN नबंर गलत डाला जाता है तो SIM कार्ड LOCK हो जाता है जिसे केवल 8 Digit के PUK (PIN Unblocking Key) की सहायता से ही खोला जा सकता है जो केवल Service Provider के पास उपलब्ध रहता है जिसे पुलिस अन्वेषण में आसानी से, Service Provider से लेकर SIM कार्ड को खोला जा सकता।

SIM कार्ड में निहित महत्वपूर्ण जानकारियां

I. Service Providers Name

II. IMSI International Mobile Subscriber

Identity

III. Subscriber Location information

IV. Phone Book

V. Cell BCCH Broadcast control channel

VI. Last dialed Numbers

VII. Test Messages

VIII. Short dial numbers

ix. MSISDN

SIM कार्ड में Location Area Identifier (LAI) की information स्टोर रहती है जो Mobile के तात्कालीन स्थल के बारे में बताता है तथा यह information mobile के Switch off होने पर भी SIM कार्ड में स्टोर रहती है जो उस स्थल के बारे में बताता है जहां पर Mobile से Phone किया गया था, यह भी पुलिस अन्वेषण के पहलू से अत्यंत महत्वपूर्ण तथ्य है।

GSM Cellular Mobile Technology में SMS (Short Message Service Center) सर्विस अत्यंत लोकप्रिय सर्विस है, SIM कार्ड के अंदर Short Messages को स्टोर करने की क्षमता होती है। यह Short Messages अन्वेषण के परिदृश्य से लाभकारी सिद्ध हो सकते है यहां यह महत्वपूर्ण है कि अपराधी ने अपने SIM कार्ड से Short Messages मिटा भी दिया हो तो उन्हें पुनः स्थापित किया जा सकता है जब तक कि उस SIM कार्ड की Memory Space पर पुनः दोबारा ना लिखा गया हो। SIM कार्ड में Phone Book भी रहती है जिसमें से अपराधी से जुड़े हर संभावित व्यक्ति तक आसानी से पहुंचा जा सकता है। SIM कार्ड में उपलब्ध Short Dial Number और Last Dialed Number भी अपराधी से जुड़े संपर्कों की जानकारी दे सकते हैं।

SIM कार्ड के कुछ प्रचलित पुलिस अन्वेषण Tool निम्नानुसार है

Netherlands Forensic Institute " का Card 4 labs"

SIM Manager Pro "SIMMAN"

CHIPIT

SIMSCAN

Mobile Edit

Mobile Hand Set

वर्तमान में बाजार में अनेक प्रकार के GSM Mobile Phone उपलब्ध है प्रत्येक की अपनी एक अलग खासियत है जो उसे दूसरे मोबाईल फोनों से अलग करती है पुलिस अन्वेषण कि दृष्टि से प्रत्येक प्रकार के मोबाईल फोनो की स्ट्डी करना यहां संभव नहीं है यहां केवल सभी Mobile Phone के सामान्य फ़क्शंस को ही स्ट्डी किया जा सकता है। प्रत्येक Mobile Phone में सुरक्षा कारणों से एक PIN CODE पासवर्ड् रहता है जो कि Subscriber द्वारा रखा जाता है जो सामान् रूप से Subscriber पर ही निर्भर रहता है कि वो इसे चालू रखे या बंद रखे। Mobile Phones में Onboard Flash Memory Chips रहती है जो काफी हद तक कम्प्यूटर कि हार्ड डिस्क की तरह ही प्रतीत होती है पुलिस अन्वेषण की दृष्टि से Mobile Phones को डेटा केबल कि सहायता से कम्प्यूटर से जोड़ लिया जाना चाहिए फिर उसका Cyber Crime Investigation की ही भांति अन्वेषण कर लिया जाना चाहिए।

Mobile Hand Set में निहित महत्वपूर्ण जानकारियां

IMEI (International Mobile Equipment Identity)

Short Dialed Numbers

Text Messages

Stored Audio Recordings

Stored Computer Files like : Image, Video, Word and Excel.

Logged Incoming calls and dialed numbers

Stored Calendar Events

GPRS WAP and Internet Settings

INEI जो प्रत्येक Mobile Phones के लिए एक / यूनीक नंबर होता है जो सामान्य Phone में *#06# की सहायता से Mobile पर देखा जा सकता है इसी तरह *#0000# Mobile के साफ्टवेयर की जानकारी देता है। यहां यह महत्वपूर्ण है कि प्रत्येक Mobile Phones कि Phones Memory तक पहुंचने के लिए अलग से एक साफ्टवेयर कि आवश्यकता होती है सामान्यतः इन को Flashers कहते हैं।

उपरोक्त समस्त जानकारियां इस Cellular Mobile Technology का केवल 30 प्रतिशत से 50 प्रतिशत ही है, Cellular Mobile Technology कि Growth Rate को देख कर यह कहना कतई अवश्यंभावी नहीं होगा कि कुछ दिनों में अपराधी के Mobile से न केवल उस अपराधी की सटीक स्थिति अपितु उसके घर, आफिस और उसके रिश्तेदार या कहे उससे संबंधित प्रत्येक व्यक्ति को Cellular Mobile Technology की सहायता से पहचान कर Locate कर पाना संभव हो सकेगा।

अतः वर्तमान समय में यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि सभी प्रकार के आपराधिक मामलों में पुलिस अन्वेषण से जुड़े समस्त पुलिस अधिकारियों को Cellular Mobile Network के महत्व एवं इससे मिलने वाले जानकारियों को समझना होगा ताकि इससे ना केवल अपराधियों तक जल्द से जल्द पहुंचा जा सके एवं पुलिस की कार्यप्रणाली को और अधिक प्रभावशाली बनाया जा सके।

❐

आदमियों की भगदड़ में कुचलती इंसानी जिंदगियां

डा. एस. के. कटारिया
81/41 नीलगिरी मार्ग, मानसरोवर जयपुर – 302020

घटना 13 नवंबर, 2004 की है। नई दिल्ली के व्यस्ततम रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म दो एवं तीन पर मची भगदड़ में 5 यात्री मारे गए तथा 10 घायल हो गए। यह भगदड़ पटना जाने वाली जनसाधारण एक्सप्रेस में बैठने के लिए एकत्र हुई भारी भीड़ के कारण मची थी। यद्यपि नई दिल्ली रेलवे स्टेशन से प्रतिदिन लाखों यात्रियों का आना जाना होता है किंतु इस जानलेवा भगदड़ तथा अव्यवस्था ने बहुत सारे यक्ष प्रश्न खड़े कर दिए। प्रश्न यह है कि क्या वह मात्र भीड़ मानसिकता के कारण उपजी महज एक तात्कालिक अव्यवस्था थी या एक सुनियोजित षडयंत्र था? बेरोजगारी, भुखमरी, स्वार्थ तथा संवेदनशून्य समाज में कैसा भी अमानवीय कृत्य संभव है।

दूसरी घटना 12 अप्रैल, 2004 की है तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी के संसदीय क्षेत्र में भाजपा नेता लालजी टंडन के 70 वें जन्मदिन पर आयोजित समारोह में मुफ्त साड़ियां बांटने के दौरान मची भगदड़ में लगभग 30 महिलाएं एवं बच्चे कुचल कर मारे गए थे। राजनीतिक दृष्टिकोण को एक तरफ रख कर सोचें कि क्या यही भारत की तरक्की है? साड़ी लेने वालों में सभी महिलाएं निर्धन वर्ग की रही होंगी, इसमें भी संदेह है। भारतीयों का एक बड़ा हिस्सा चारित्रिक रूप से संदेहास्पद है। दूसरी ओर हम में इस प्रकार के भीड़-भाड़ भरे कार्यक्रम आयोजित करने की समझ भी पैदा नहीं हुई है। प्रतिदिन कहीं न कहीं इस प्रकार के छोटे-बड़े हादसे होते हैं तथा पुलिस, प्रशासन तथा आयोजक 'संकट का प्रबंध' (क्राइसिस मैनेजमैंट) नहीं कर पाते हैं।

इसी प्रकार फरवरी, 2004 को सउदी अरब स्थित मीना में हज यात्रा के दौरान शैतान को पत्थर मारने की रस्म के दौरान मची भगदड़ में 244 हजयात्रियों की मृत्यु हो गई तथा 300 घायल हो गए।

नासिक के कुंभ मेले में शाही स्नान के समय दि. 27 अगस्त, 2003 को मची भगदड़ में 41 व्यक्ति मारे गए तथा 155 से अधिक व्यक्ति घायल हो गए। पुलिस के अनुसार यह दुर्घटना शाही स्नान के पश्चात् कुछ साधुओं द्वारा भीड़ में फेंके गए सिक्कों तथा टॉफियों को लूटने के प्रयास में हुई थी। इसी प्रकार बहुजन समाज पार्टी द्वारा लखनऊ में आयोजित 'निंदा-धिक्कार महारैली' (28 सितंबर, 2002) की समाप्ति के पश्चात चारबाग स्टेशन पर मची भगदड़ से 20 व्यक्ति मारे गए थे तथा 100 से अधिक घायल हो गए थे। इस प्रकार की दुर्घटनाएं दुनिया भर में घटित होती रहती हैं। वस्तुतः विश्वभर में प्रसिद्ध तीर्थ स्थलों पर ऐसी दुर्घटनाएं आम बात है। इस तरह सन् 1999 में मकर सक्रांति के पावन पर्व पर मकर ज्योति देखने हेतु केरल में सबरीमाला स्थान पर भगवान अय्यपा मंदिर पर एकत्र हुई सैकड़ों मनुष्यों की भीड़ के कारण न केवल पहाड़ी ढह गई बल्कि ऐसी भगदड़ मची कि 60 व्यक्ति अपने प्राणों से हाथ धो बैठे। सबरी माला में ही दिसंबर, 2000 में भगदड़ मचने से सीढ़ियों से 20 फीट गहरी खाई में गिरने से 10 यात्री मारे गए थे तथा 150 घायल हुए थे। इस प्रकार की घटनाएं मानव सभ्यता के लिए सर्वथा नई नहीं हैं किंतु दुःख का विषय यह है कि तमाम प्रकार की वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी प्रगति करने के बावजूद आज भी बहुत से निरीह मनुष्य अकारण काल कलवित हो जाते हैं। तीर्थ यात्राओं, मेलों, त्यौहारों, धार्मिक सम्मेलनों तथा अन्य सामूहिक आयोजनों में स्वाभाविक रूप से ऐसे

प्रबंध किए जाने चाहिए ताकि दर्दनाक हादसे घटित न हों। सर्वाधिक पीड़ा का विषय यह है कि हम किसी भी दुर्घटना से सबक नहीं लेते हैं बल्कि सैकड़ों मनुष्यों की मौत को सहजता से भुला देते हैं। यद्यपि सबरीमाला दुखांतिका के न्यायिक जांच के आदेश हो गए थे किंतु क्या जांच कराना ही पर्याप्त है?

यदि हम विगत कुछ वर्षों की घटनाओं का विश्लेषण करें तो पाते हैं कि एक जैसी घटनाओं की प्रतिवर्ष पुनरावृत्ति हो रही है। इतिहास साक्षी है कि कुंभ तथा महाकुंभ तीर्थ मेलों में हर बार कमजोर, वृद्ध, बच्चे, महिला तथा बदकिस्मत लोगों ने भगदड़ में कुचल कर अपने प्राण गंवाए हैं। महाकुंभ मेलों में लाखों श्रद्धालु एकत्र होते हैं अतः किसी न किसी स्थान पर भ्रमवश या षडयंत्रवश दुर्घटनाएं घटित हो जाती हैं। दिल्ली की एक स्वयंसेवी संस्था ने 1997 में कुंभ-मेलों में अब तक घटी दुर्घटनाओं (मुगलकाल से 1997 तक) में 71000 व्यक्तियों के प्राण गंवाने का ब्यौरा प्रस्तुत किया था। ये दुर्घटनाएं मुख्यतः भगदड़ मचने से संबंधित थी क्योंकि मानव स्वभावतः अपने प्राणों की रक्षा में भागता है। इस अफरा–तफरी में निरीह तथा बेबस मनुष्य तथाकथित मानवतावादियों के पैरों तले कुचल जाते हैं।

भारत ही नहीं विश्व के अन्य देशों में भी इस प्रकार की दुर्घटनाएं खूब होती हैं। सन् 1990 में मक्का की एक सुरंग में विस्फोट से मची भगदड़ में 1426 हजयात्री मारे गए थे जिनमें अधिकतर इंडोनेशिया तथा तुर्की के निवासी थे। सन् 1994 में मीना में भगदड़ से 270 हजयात्रियों ने प्राण गंवाए। अप्रैल, 1997 में हजयात्रा के दौरान मीना में यात्री शिविरों के तंबूओं में लगी आग से उतने व्यक्ति प्रभावित नहीं हुए जितने की जान बचाने के लिए भागे व्यक्तियों के द्वारा आपस में एक दूसरे को रौंदने से मारे गए थे। दुखांतिका में 343 हजयात्री मारे गए थे जिनमें 200 भारतीय थे। इस दुर्घटना की यादें अभी लोगों के जहन से उतरी भी नहीं थी कि 5 अप्रैल, 1998 को पुनः उसी जगह (मीना) हजयात्रियों में भगदड़ मच गई तथा 150 व्यक्तियों ने प्राण त्याग दिए।

5 मार्च, 2001 को मीना में ही शैतान को पत्थर मारने की रस्म के दौरान 36 व्यक्ति मारे गए थे जबकि सन् 2003 में 14 हजयात्री मृत्यु के शिकार हुए। सऊदी अरब में हजयात्रा के अतिरिक्त अन्य दुर्घटनाओं में भी काफी व्यक्ति मारे जा चुके हैं। कुछ वर्षों पूर्व कुछ व्यक्तियों द्वारा मक्का की एक बड़ी मस्जिद पर कब्जा कर लेने पर दो सप्ताह की घेराबंदी एवं संघर्ष के दौरान कुछ लड़ाके तथा काफी सैनिक ढेर हो गए थे जबकि इस घटना के कुछ वर्षों बाद मक्का की ही बड़ी मस्जिद में पश्चिमी देशों के विरुद्ध विरोध प्रदर्शन के दौरान काफी व्यक्ति मारे गए थे। ऐतिहासिक स्थलों पर एकत्र होने वाली भीड़ के कारण भी ऐसी दुर्घटनाएं होती रही हैं। इस संबंध में 5 दिसंबर, 1980 को दिल्ली के ऐतिहासिक स्तंभ कुतुबमीनार में घटी घटना आज भी रोंगटे खड़े कर देती है। इस दुर्घटना में कुतुबमीनार की विभिन्न मंजिलों को निहार रहे 45 स्कूली बच्चे कुछ ही मिनटों में कालग्रास का शिकार हो गए थे। परिणामस्वरूप कुतुबमीनार के भीतर जाकर ऊपर चढ़ने के लिए पाबंदी लगा दी गई। इसी प्रकार की नाव दुर्घटना गंगासागर तीर्थयात्रियों के साथ 1994 के मकर सक्रांति पर्व पर हुई जिसमें 200 श्रद्धालु मारे गए थे।

विगत कुछ वर्षों से अमरनाथ तथा कैलाश मानसरोवर यात्रा भी जोखिम भरी हो चुकी है। कुछ दुर्घटनाएं मानवीय भूलों से तो कुछ प्राकृतिक आपदाओं के कारण हुई हैं। सन् 1960 में अमरनाथ यात्रा के दौरान मरे 51 तीर्थ यात्रियों को संवेदना प्रकट करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने स्थायी समाधान करने का वचन दिया था किंतु अगस्त, 1996 में कश्मीर में अमरनाथ यात्री प्राकृतिक मार के शिकार हुए तथा 200 व्यक्तियों ने प्राण त्याग दिए। इस घटना के पश्चात् सरकार ने 'नितिश सेन कमेटी' गठित की जिसने अपनी

रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की तथा जम्मू–कश्मीर सरकार ने तद्नुसार कदम उठाए भी हैं। लेकिन 17 अगस्त, 1998 को कैलाश मानसरोवर यात्रा के समय पिथौरागढ़ जिले के मालवी गांव में चट्टान खिसकने से 70 तीर्थयात्री तथा कुछ ग्रामवासी कुचले गए। उस समय यह सवाल जोर शोर से उठा था कि अमरनाथ यात्रा के सुझाव क्या कैलाश मानसरोवर यात्रियों के लिए हितकर नहीं हो सकते थे?

क्या सरकार हर बार नए स्थान पर नई दुर्घटना के पश्चात ही कोई कदम उठाएगी?

तीर्थ यात्राओं के अतिरिक्त अन्य सामूहिक आयोजनों के समय भी दुर्घटनाओं की आशंकाएं बढ़ जाती हैं लेकिन आवश्यक प्रबंध नहीं होते हैं। नागपुर में 27 नवंबर, 1994 को गोवारी आदिवासियों ने स्वयं को अनुसूचित जनजाति में सम्मिलित कराने हेतु एक विशाल जनसभा का आयोजन किया था किंतु शांतिपूर्ण तरीके से चल रही उस जनसभा में कैसे यकायक भगदड़ मची यह आज भी रहस्य बना हुआ है। महाराष्ट्र सरकार ने इसकी जांच हेतु 'दानी आयोग' गठित किया था जिसने 1999 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। सन् 1997 के जून माह में तुंजावुर के वृहदेश्वर मंदिर में भगदड़ के कारण 55 श्रद्धालु मौत के मुंह में समा गए थे किंतु न तो सरकार ने कोई सबक लिया और न ही जनता में जागृति आई है।

दिसंबर, 1995 की उस त्रासदी दुर्घटना को कौन भूल सकता है जिसमें डब वाली (हरियाणा) में स्कूली बच्चों के एक कार्यक्रम के दौरान टैंट में लगी आग तथा आग के कारण मची भगदड़ से 440 बच्चे एवं वृद्ध मारे गए थे। इस अग्निकांड ने संपूर्ण भारत को झकझोर दिया था तथा सरकार ने रेडियो, टी. वी. एवं अखबारों के माध्यम से सामूहिक आयोजनों के संबंध में एहतयात बरतने के दिशा–निर्देश जारी किए किंतु ये निर्देश कितने प्रभावी हुए तथा भारतीयों ने क्या सबक लिया इसका उत्तर बारीपदा में मिल गया। बारीपदा जिला मयूर भंग (उड़ीसा) में आयोजित एक धर्म सम्मेलन में गैस सिलिंडरों में लगी आग से साधु–महात्माओं में भगदड़ मची तथा 311 व्यक्ति असमय मृत्यु को प्राप्त हुए। उसी प्रकार का अग्निकांड 13 जून 1997 को दिल्ली के उपहार सिनेमा में 'बार्डर' फिल्म के प्रदर्शन के दौरान हुआ जबकि 70 दर्शक आग से कम तथा भगदड़ एवं घुटन से ज्यादा मरे।

अब मूल प्रश्न यह है कि आखिर हम इन विभषिकाओं को इतनी सहजता से क्यों लेते हैं? क्यों नहीं ऐसे प्रयास तथा प्रबंध किए जाएं ताकि दुर्घटनाओं की पुनरावृत्ति न हो पाए। संविधान समीक्षा आयोग (2000–02) ने सुझाया था कि संविधान की सातवीं अनुसूची की तृतीय सूची (समवर्ती) में 'प्राकृतिक एवं मानवजाति आपदाओं तथा आपात स्थितियों का प्रबंधन' विषय सम्मिलित किया जाए ताकि बाढ़, भूकंप, सूखा, तूफान, आगजनी, भूस्खलन तथा अकाल सहित मानव निर्मित दुर्घटनाओं जैसे–युद्धों, आतंकवादी घटनाओं, भगदड़ तथा अन्य दुर्घटनाओं से मानव जाति को बचाया जा सके। वस्तुतः मानवजाति दुर्घटनाएं मूलतः मानवीय भूलों तथा लापरवाही का दुष्परिणाम ही होती हैं। स्वार्थ तथा भौतिकवादी संस्कृति का शिकार मानव कैसी भी घिनौनी हरकत कर सकता है। पुलिस सूत्रों का कहना है कि भगदड़ संयोगवश न होकर बल्कि कई बार तो षडयंत्रपूर्वक पूर्व नियोजित भी होती है। कुछ आपराधिक प्रवृति के शैतान ऐसे अवसरों पर बेबस इंसानों का गलत फायदा भी उठाते हैं। जो भी हो लेकिन इतना सत्य है कि न तो सामाजिक स्तर पर और न ही प्रशासनिक स्तर पर इन दुर्घटनाओं से कोई सीख मिलती है बल्कि कुछ दिन शौक संवेदना की रस्म अदायगी के बाद पुनः जिंदगी उसी ढर्रे पर आ जाती है। यदि आज भी मानव जिंदगियां जंगली सिद्धांतों (योग्यतम का ही जीवन) पर निर्भर है तो ऐसा विकास किस काम का?

❐

सुनवाई का अधिकार

Right of Hearing

डा. अम्बरीष कुमार श्रीवास्तव
सहायक पुलिस महानिरीक्षक (प्रशि.)
पुलिस मुख्यालय, भोपाल
म.प्र.

'दूसरे पक्ष को सुनो' लेटिन की यह उक्ति (Audi Alteram Partem) नैसर्गिक न्याय का दूसरा नियम है। यह नियम प्रशासन के स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध उस स्थिति में एक ऐसा अवसर है। जब कभी किसी के विरुद्ध कोई निर्णय या आदेश पास किया जाना है तो उसके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को अपने बचाव के लिए अवसर प्रदान किया जाना चाहिए सशक्त रक्षोपाय प्रदान करता है। इस सूत्र के अनुसार जो कोई व्यक्ति दूसरे पक्ष को सुने बिना निर्णय देता है, भले ही उसने ठीक निर्णय दिया हो, उसने वह नहीं किया है जो उचित था अर्थात जो उसे सुनकर निर्णय देना चाहिए था।

लार्ड हीवर्ट ने ठीक ही कहा था कि 'न्याय न केवल किया जाना चाहिए बल्कि उसको प्रतीत भी होना चाहिए।' यह बात प्रायः कही जाती है कि ईश्वर ने आदम तथा ईव को उनके आदेश का उल्लंघन करने पर दंड के पूर्व उनको अपना स्पष्टीकरण प्रस्तुत करने का अवसर दिया था।

दूसरे पक्ष को भी सुनो :

'दूसरे पक्ष को भी सुनो' का यह सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि किसी भी व्यक्ति को बिना सुने दोषसिद्ध नहीं किया जाना चाहिए। इस नियम का लागू होना कठोर रूप से तथा कथित न्यायिक प्रक्रिया तक ही सीमित नहीं है, परन्तु इसके घेरे में सभी न्यायिक–कल्प कार्य और किसी सीमा तक प्रशासनिक कार्य भी आते हैं।

भारत संघ बनाम टी. आर. वर्मा ए.आई. आर. 1957 SC 882 के मामले में माननीय न्यायधीश वेंकट रमन अय्यैर ने अच्छे प्रशासन एवं अच्छी विधिक प्रक्रिया के तौर पर प्रत्येक नागरिक को उचित सुनवाई का अवसर देने के संबंध में इस प्रकार का मत व्यक्त किया-

नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुसार यह अपेक्षित है कि प्रत्येक पक्ष को सब सुसंगत साक्ष्य, जिस पर वह निर्भर करता है, प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाना चाहिए। विरोधी पक्ष का साक्ष्य उसकी उपस्थिति में लिया जाना चाहिए और उसे ऐसे साक्ष्यों की प्रतिपरीक्षा करने का अवसर जिनकी दूसरे पक्ष ने परीक्षा की हो और किन्हीं भी तथ्यों पर उसके विरुद्ध बिना उसे उनका परीक्षण करने का अवसर दिए विश्वास नहीं किया जाना चाहिए।'

'दूसरे पक्ष को भी सुनो' इस सिद्धांत का मुख्य उद्देश्य अव्यवस्थित प्रशासनिक न्याय निर्णय के विरुद्ध प्रक्रिया–संबंधी रक्षापायों का उपबंध करना है। इस नियम को बहुत बड़े पैमाने पर स्वीकार किया गया है। **'दूसरे पक्ष को सुनो'** का नियम अर्थात 'बिना सुने किसी की भर्त्सना अथवा दंड नहीं दिया जा सकता' का नियम किसी भी प्राधिकारी अथवा दंड देने वाले निर्णायक को मनमानी या स्वेच्छाचारिता से रोकता है। **न्याय का कोई भी अर्थ ही नहीं होगा यदि उस व्यक्ति को जिसके विरुद्ध न्याय मांगा गया है अपने मामले के तथ्यों को बताने का अवसर न दिया गया हो।**

प्रत्येक मामले में मौलिक बातें जो ध्यान में रखनी चाहिए वह यह है कि :

क्या प्रभावित व्यक्ति को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान किया गया तथा

क्या निर्णायक ने ऋजुता से उचित एवं युक्तियुक्त ढंग से अपने कर्तव्य का निर्वाह किया है।

यह उतना जरूरी नहीं है कि उसने न्यायिक तौर पर कार्य किया है जितना कि औचित्यता पूर्ण ढंग से कार्य करने के विशेष मामले की परिस्थितियों के अनुसार

अपनाई प्रक्रिया उचित, ऋजु एवं युक्तियुक्त होनी चाहिए।

'विधि का यह एक मौलिक नियम है कि कोई ऐसा निर्णय नहीं किया जाना चाहिए जो किसी व्यक्ति को मामले की सूचना दिए बिना तथा अपने पक्ष को प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना प्रतिकूल रूप से प्रभावित करे। न्याय तथा युक्ति युक्तता परीक्षण अमूर्त नहीं हो सकता, इस परीक्षण को व्यावहारिक होना चाहिए। कोई भी विहित प्रक्रिया उचित, ऋजु तथा युक्तियुक्त होनी चाहिए चाहे भले ही उसके संबंध में कोई विशिष्ट प्रावधान परिनियम में अथवा उसके अंतगर्त बनाए गए नियमों में न हो तो भी सुनवाई का उचित अवसर उसमें विवक्षिप्त रूप से विद्यमान मानना चाहिए'।

यदि किसी प्राधिकारी के द्वारा अपनी शक्तियों के प्रयोग में लिए गए निर्णय अथवा कृत्य से किसी के अधिकारों पर विपरीत प्रभाव पड़ता है तो चाहे वह कृत्य प्रशासनिक प्रकृति का ही क्यों न हो, उसे ऐसी प्रक्रिया अपनानी चाहिए जो ऋजु एवं युक्तियुक्त हो, दूसरे शब्दों में नैसर्गिक न्याय के अनुसरण में हो।

प्रशासनिक अधिकारी को भी चाहिए कि वे ऐसे मामले में जहां किसी व्यक्ति के मौलिक अथवा विधिक अधिकारों की अवहेलना होती हो अथवा उस पर अनुचित नियंत्रण आरोपित होता हो वहां वह इस बात से आश्वस्त हो कि न्याय न केवल किया जाए बल्कि, न्याय किए जाने का आभास भी होना चाहिए।

'दूसरे पक्ष को सुनो' के नियम की अपेक्षाओं का पालन न करने की त्रुटि निर्णय को दूषित कर देता है। जहां इस नियम का उल्लंघन होता है वहां कोई परिणामी प्रतिकूल प्रभाव अथवा क्षति साबित नहीं होता क्योंकि नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन किया जाना अपने में एक प्रतिकूल प्रभाव माना जाएगा और यह कहना कि नैसर्गिक न्याय के उपरोक्त नियम का पालन किए जाने पर भी वही परिणाम होता जो न पालन करने पर एक उचित उत्तर नहीं है।

इस नियम के पीछे उद्देश्य यह है कि मनमाने प्रशासनिक न्याय निर्णयों के विरुद्ध प्रक्रियात्मक रक्षोपायों को प्रदान किया जाए। इसीलिए ये नियम अत्यंत मान्य हो गए हैं। न्याय की अवधारणा का ही लोप हो जाएगा यदि उस व्यक्ति को, उसके विरुद्ध न्याय की तलाश है, अपनी बात प्रस्तुत करने का अवसर नहीं प्राप्त रहता।

राज्य द्वारा निहित हितों के अल्पीकरण में किसी व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला आदेश केवल न्याय और उचित प्रक्रिया के मौलिक नियमों के अनुकूल ही दिया जा सकता है। मामले के तथ्य अत्यंत रोचक हैं। याचिका दाता सरकारी नियोजन में महिला-चिकित्सक थी। उसने नौकरी प्रारंभ करने के समय अपनी जन्म-तिथि 10 अप्रैल 1910 बताई थी। बाद में सरकार को किसी सूचना द्वारा पता चला कि उसने जन्म-तिथि के विषय में गलत बयान दिया था और उसकी वास्तविक जन्मतिथि 4 अप्रैल 1907 थी। जन्म-तिथि को फिर से निश्चित करने के लिए जांच बैठाई गई और जांच-अधिकारी की रिपोर्ट के आधार पर जिसने बाद वाली जन्मतिथि को ठीक पाया। महिला चिकित्सक के विरुद्ध अनिवार्य सेवा-निवृति का आदेश किया गया। महिला ने उसे उच्च न्यायालय के समक्ष इस आदेश की वैधता को इस आधार पर चुनौती दी कि उसको जांच के समय सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था जिससे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का अतिक्रमण हुआ। उच्चतम न्यायालय ने याचिका दाता की दलील को मान लिया और राज्य सरकार की अपील खारिज कर दी।

माननीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह ठीक है कि आदेश का स्वरूप प्रशासनिक था, परन्तु एक प्रशासनिक आदेश भी, जिसमें सिविल परिणाम अंतर्निहित हो नैसर्गिक न्याय के नियमों की संगति में ही किया जाना चाहिए। अपील के प्रयुत्तरदाता को राज्य सरकार का आधार उसके विरुद्ध साक्ष्यों को बताकर इस बात का अवसर देना चाहिए था कि वह अपने विरुद्ध

साक्ष्यों के बारे में स्पष्टीकरण दे सकती तथा अपनी बात पूरी तरह से कह सकती। ऐसे कोई कदम नहीं उठाए गए थे, अतः आदेश दोषपूर्ण अभिनिर्धारित किया गया।

सरजू प्रसाद बनाम **जनरल मैनेजर ए.आई.आर. 1981 एस सी 1481** के मामले में न्यायालय ने यह कहा कि जहां कोई मालिक अपने सेवक की जन्म–तिथि को एक बार स्वीकार करने के बाद बदल देता है और बदलने के पूर्व उसको सुनवाई का अवसर नहीं प्रदान करता तो वह नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन होगा। मालिक द्वारा जन्म–तिथि को बदलने के आशय से कोई आदेश पास किया जाना और उसी आधार पर सेवक को अवकाश प्रदान करना गलत है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के प्रतिकूल होने के कारण अपपास्त कर दिया जाएगा।

बोर्ड ऑफ हाईस्कूल बनाम **घनश्याम ए. आई आर 1962 एस सी 1110** वाले मामले में प्रत्यार्थी परीक्षा में अनुचित साधनों का प्रयोग करते हुए परीक्षा–भवन में पकड़ा गया था। इस मामले को कार्रवाई हेतु परीक्षा समिति को सौंपा गया। परीक्षार्थी का परीक्षाफल रद्द कर दिया गया और उसके अगले वर्ष परीक्षा में बैठने से वर्जित कर दिया गया। परीक्षा समिति ने निर्णय लेने से पूर्व प्रत्यार्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों का खंडन करने का कोई अवसर प्रदान नहीं किया। उस पर नियम में जिसके अधीन समिति ने कार्य किया, यह स्पष्ट नहीं था कि उसे किस प्रकार कार्य करना था। उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि समिति द्वारा किए गए कार्य न्यायिक–कल्प थे और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत, जिसमें यह अपेक्षा की जाती है कि अन्य पक्ष को अवश्य सुना जाना चाहिए समिति के समक्ष स्पष्टीकरण देने तथा अपना मामला प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान नहीं किया गया था। अतः समिति का निर्णय, जिसमें परीक्षा–परिणाम रद्द किया गया था। उसे अगले वर्ष परीक्षा में बैठने से विवर्जित किया गया था, विधि में दूषित अभिनिर्धारित किया गया।

दिल्ली उच्च न्यायालय ने **मास्टर विभु कपूर** बनाम **कौंसिल आफ इंडियन स्कूल सर्टीफिकेट परीक्षा ए. आई. आर. 1985 दिल्ली 142** के मामले में याची पर परीक्षा में दूसरे परीक्षार्थी की कापी से नकल करने के संदेह के आरोप पर उसको दंडित करने के निर्णय को रद्द कर दिया क्योंकि इस प्रकार के निर्णय लिए जाने के पूर्व नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन नहीं किया गया था। बाद में अभियुक्त परीक्षार्थी का उत्तर दूसरे परीक्षार्थी से मिल रहा था। उसको कोई आरोप पत्र प्रदान नहीं किया गया और न ही कोई सुनवाई का अधिकार दिया गया। किंतु इस बात पर जांच भी नहीं की गई कि क्या अभियुक्त परीक्षार्थी से काफी दूर पर बैठा जिसकी कापी से नकल करने का आरोप उस पर लगाया गया था। न्यायालय ने दंड के निर्णय को रद्द करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि नैसर्गिक न्याय की उपेक्षा में किसी भी प्रकार का दंड नहीं दिया जा सकता।

हीरानाथ मिश्र बनाम **प्रिंसिपल, राजेन्द्र मेडिकल कालेज, रांची तथा एक अन्य ए. आई आर 1973 एस सी 1260** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत कठोर प्रकृति के नहीं है और ये विभिन्न परिस्थितियों में बदल सकते हैं। इस मामले में मेडीकल कॉलेज के कुछ विद्यार्थी नाली के पाईपों द्वारा रात के घनें अंधकार में लड़कियों के छात्रावास के प्रथम मंजिल पर चढ़ गए जहाँ छात्रावास की लड़कियों के साथ अभद्र व्यवहार किया गया। विषय में प्रिंसिपल से शिकायत की गई। उन्होंने एक जांच–समिति गठित की। जिन विद्यार्थियों के विरुद्ध शिकायत की गई थी, उन्हें एक–एक करके बुलाया गया और उन्होंने अपना स्पष्टीकरण देते हुए इस मामले में शामिल होने से इंकार किया। लड़कियों के कथन याचिका दाताओं की उपस्थिति में अभिलिखित नहीं किए गए थे और न उन्हें सच्चाई को परखने के लिए साक्षियों की प्रतिपरीक्षा का अवसर ही दिया गया। समिति की रिपोर्ट भी उन्हें उपलब्ध नहीं

कराई गई। इन कारणों से यह दलील दी गई जांच दूषित थी और प्रिंसिपल द्वारा दिया गया आदेश अवैध था। न्यायालय ने इन दलीलों को रद्दकर दिया और अभिनिर्धारित किया कि नैसर्गिक न्याय के नियम कठोर नहीं है और मामलों के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए नैसर्गिक न्याय की आवश्यकताओं की पूर्ति हो गई थी। याचिका दाताओं को अपना मामला प्रस्तुत करने का अवसर दिया गया था। मामले के तथ्य और परिस्थितियां इससे अधिक की अपेक्षा नहीं करते हैं अतः याचिका खारिज कर दी गई।

राधाकृष्णा बनाम **उस्मानिया विश्वविद्यालय ए. आई. आर. 1974 ए पी 283** के मामले में उस्मानिया विश्वविद्यालय के एम. बी. डिग्री कोर्स में याची के प्रवेश–परीक्षा को इसलिए रद्द कर दिया गया था कि परीक्षा में नकल की गई थी जिससे विश्वविद्यालय के पुनः परीक्षा लेने का निर्णय लिया, जिसका याची ने इस आधार पर विरोध किया कि नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन हुआ था क्योंकि उसे इस स्पष्टीकरण का अवसर नहीं दिया गया कि परीक्षा रद्द क्यों न की जाए। न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि चूंकि बहुत बड़े पैमाने पर नकल हुई है और पूरी परीक्षा रद्द हुई है, अतः नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ नहीं माना जा सकता। ऐसे मामलों में न तो अवांछनीय है और न ही अनिवार्य है कि सभी अभ्यार्थीयों को ऐसे नोटिस जारी किए जाएं कि वे यह बताएं कि परीक्षा रद्द क्यों न की जाए। ऐसी परिस्थिति में सभी अभ्यार्थियों को नोटिस दिए जाने पर बल देना नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उपहास करना है और उन्हें अस्वाभाविक रूप देना है।

'दूसरे पक्ष को भी सुनो' के नियम के तत्व :

(1) सूचना (सुनवाई)

सूचना : यह माना हुआ सिद्धांत है कि न्याय–निर्णय प्राधिकारी द्वारा प्रभावित पक्ष अथवा पक्षों की कार्रवाई आरंभ करने के पूर्व सूचना आवश्यक दी जानी चाहिए। सूचना की अपेक्षाओं से तात्पर्य यह है कि वह पक्ष, जिसके नागरिक अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है, उसे उस मामले की, जो उसके सामने आना है, समुचित सूचना मिलनी चाहिए और अपनी बात कहने का अवसर मिलना चाहिए। बिना सूचना के आरंभ की गई कार्रवाईयां नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल होंगी।

सूचना उचित सुनवाई के अधिकार का निचोड़ मानी जाती है। सूचना में दिए गए आधार, पर कार्रवाई की जानी प्रस्तावित है स्पष्ट, विनिर्दिष्ट तथा असंदिग्ध होने चाहिए। जहां सूचना दिए आधार अस्पष्ट, अविनिर्दिष्ट, अनिश्चित तथा असंदिग्धार्थी हों वहां इसे उचित सूचना नहीं माना जाएगा और इस प्रकार उचित सुनवाई के अधिकार का उल्लंघन माना जाएगा। विधि में संदिग्ध नोटिस का कोई महत्व नहीं होता, क्योंकि ऐसे दोषपूर्ण नोटिस के आधार के बाद की सभी कार्रवाईयां दूषित हो जाती हैं।

जहां किसी कर्मचारी को तामील किए गए आरोप--पत्र में कपट का अभिकथन किया गया किंतु उसमें कपट के विवरण नहीं दिए गए हैं, न्यायालय ने ऐसे आरोप–पत्र को संदिग्धपूर्ण अभिनिर्धारित किया। इसी प्रकार जहां आपात लाईसेंस को बिना विशिष्ट आधारों को बताए निरस्त कर दिया, ऐसे नोटिस न्यायालय ने दोषपूर्ण अभिनिर्धारित कर दिया। इसी प्रकार जहां किसी छात्र पर परीक्षा में अनुचित साधनों के प्रयोग का आरोप है, और उसको आरोप–पत्र दे दिया है किंतु उसको यह नहीं सूचित किया गया कि उसने कौन–सा अनुचित साधन का प्रयोग किया और न ही उसके विषय में अनुचित साधन समिति द्वारा कोई सुनवाई की गई जहां न्यायालय ने ऐसे कृत्य को नैसर्गिक न्याय के विरुद्ध अभिनिर्धारित किया।

जहां याची का मूलवेतन भूतलप्रभाव से घटाने का आदेश बिना 'कारण बताओ' नोटिस जारी किए पास कर दिया जाता वहां न्यायालय ने नैसर्गिक न्याय के

नियम का घोर उल्लंघन अभिनिर्धारित किया है।

भारतीय विधि के अंतर्गत सुनवाई की आवश्यकता प्रशासनिक एवं न्यायिक–कल्प कार्रवाई का आवश्यक अंग है। प्राधिकारी द्वारा पारित कोई भी प्रशासनिक आदेश बिना सुनवाई का अवसर प्रदान किए अवैध है और वह अपास्त किया जा सकता है। सभी महत्वपूर्ण परिनियमों में प्रशासनिक विकास के लिए सुनवाई की व्यवस्था का विशेष महत्व और उपयोगिता है। उदाहरण के लिए आयकर अधिनियम 1961 के अतंर्गत लोगों को सुनवाई का विस्तृत अधिकार दिया गया है। आयुक्त, अपील सहायक आयुक्त या अपील न्यायाधिकरण का कोई भी आदेश, जो करदाता के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला हो बिना सुनवाई का अवसर प्रदान किए नहीं पारित किया जा सकता।

सुनवाई के अवसर की दो मुख्य बातें हैं–

(अ) अवसर अवश्य दिया जाना चाहिए। (ब) अवसर युक्तियुक्त हो।

ये दोनों बातें न्याय संगत हैं। न्यायालय इस बात का निर्णय ले सकता है कि किसी भी मामले में जो अवसर प्रदान किया जा रहा है, युक्तिसंगत है या नहीं। ऐसा करने के लिए उसे मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा। निर्णायक–प्राधिकारी का निर्णय के दौरान प्रस्तावित कार्रवाई–सामग्री, जिस पर आरोप आधारित है, सुनवाई उस व्यक्ति का रूख जिसके अवसर यदि कोई है, आचरण व अन्य किसी प्रकार से उसकी स्वीकृति में जिससे मामले के संबंध में निर्णय पर पहुंचना सुविधाजनक हो आदि बातों पर विचार करना आवश्यक है। उचित सुनवाई का अवसर प्रदान करने के लिए निम्न बातें आवश्यक हैं–

(1) निर्णायक–प्राधिकारी को सभी सुसंगत सामग्रियां, जो एक व्यक्ति प्रस्तुत करना चाहता है प्राप्त होनी चाहिए।

(2) उसे सभी सूचनाएं सामग्रियां या साक्ष्य, जिनका प्रयोग प्राधिकारी उस व्यक्ति के विरुद्ध किसी निर्णय पर पहुंचने के लिए करता है प्रकट करना चाहिए।

(3) उसे प्रभावित व्यक्ति को पर्याप्त सूचना या तथ्यों का खंडन करने का अवसर देना चाहिए।

(4) प्रभावित पक्षकार को यह अवसर प्रदान किया जाना चाहिए कि वह साक्षियों की प्रतिपरीक्षा कर सके।

मौखिक सुनवाई :

ब्रिटेन व अमेरिका की तरह भारत के न्यायालयों में भी मौखिक सुनवाई का अधिकार 'दूसरे पक्ष को भी सुनो' के नियम का अंग नहीं है। फिर भी कुछ कानूनी अपबंधों के अंतर्गत मौखिक तर्क या अभ्यावेदन का अधिकार प्रदत्त किया जाता है।

उदाहरणार्थ :–

(1) लोकसेवक (जांच) अधिनियम 1980

(2) सिविल लोक नियम (वर्गीकरण नियंत्रण तथा अपील) का नियम 55 ऐसी कानूनी आवश्यकता के अभाव में सामान्य नियम जो उच्चतम न्यायालय के अधिकथित किया है, वह यह है कि नैसर्गिक न्याय में आवश्यक रूप से मौखिक सुनवाई का अधिकार अंतर्विलय नहीं होता। यदि सुनवाई की कार्रवाई कोई दूसरा करता है तो यह निःसंदेह सुनवाई के अधिकार का अतिक्रमण है।

जी. नागेश्वर राव बनाम **ए. वी. आर. टी. कारपोरेशन ए. आई आर 1969 एस सी 308** के वाद में न्यायालय ने स्पष्ट रूप से यह घोषित किया कि विभाजित उत्तर दायित्व (नियमानुकूल सेक्रटरी का कर्तव्य सुनना और मंत्री का काम निर्णय देना) न्यायिक सुनवाई के सिद्धांत को विफल कर देता है। इस तरह की प्रक्रिया से व्यक्तिगत सुनवाई का उद्देश्य समाप्त हो जाता है व्यक्तिगत सुनवाई से संबंधित प्राधिकारियों को साक्षियों

की भावभंगी समझने तथा बहस के दौरान शंका समाधान का अवसर मिलता है। यदि एक आदमी सुनवाई करे और दूसरा निर्णय दे, तो व्यक्तिगत सुनवाई केवल औपचारिकता बनकर रह जाती है।

मौखिक सुनवाई का कोई अधिकार नहीं होता। जब तक इसके संबंध में स्पष्ट प्रावधान नहीं होता अथवा परिस्थितियों से यह पता चलता है कि उनके बिना पक्षकार अपनी बात अथवा प्रतिरक्षा पूरी तौर से प्रस्तुत नहीं कर सकते इस प्रकार के अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता। व्यक्तिगत सुनवाई एक वैवेकिक प्रश्न है न कि महाराष्ट्र सरकार नूरूल लतीफ, (1965) 3 एस. सी. आर. 135 क्षेत्राधिकार की बात है।

भारत संघ बनाम **मेसर्स जेसस कार. ए. आई आर 1996 एस सी 198** के अभी हाल के मामले में न्यायालय ने यह संप्रेषित किया कि सुनवाई के अधिकार के अंतर्गत यह आवश्यक नहीं है कि व्यक्तिगत सुनवाई का अथवा मौखिक सुनवाई का भी अवसर दिया जाए। सभी तथ्यों एवं परिस्थितियों के सुनवाई का अवसर दिया जाना उचित नहीं होता। जहां किसी प्राधिकारी को विवेकाधिकार परिनियमित अपीलों के संबंध में दे दिया जाता है वहां व्यक्तिगत सुनवाई का प्रावधान अत्यंत ही विषम एवं गंभीर स्थिति उत्पन्न कर सकता है। जहां नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत इस बात की अपेक्षा करते हैं कि किसी अपील अथवा प्रार्थना पत्र में विपरीत आदेश के पास करने के पूर्व सुनवाई का अवसर दिया जाए वहां यह आवश्यक नहीं कि व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रत्येक परिस्थिति में दिया जाए। यदि न्यायिक कल्प प्राधिकारी के समक्ष संबंधित व्यक्ति को अवसर प्रदान कर दिया गया है कि वह अपना पक्ष रख सके। विशेषकर कर संबंधी तथा राजस्व संबंधी मामलों में वहां नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाओं की पूर्ति हो जाती है।

सुनवाई के अधिकार के विषय में यह सामान्य धारणा है जो व्यक्ति सुने वही फैसला दे। यदि कोई दूसरा व्यक्ति सुनता है और फैसला कोई और देता है तो इस अधिकार का उल्लंघन होता है।

जी. नागेश्वर राव बनाम **ए. पी. एस. आर. टी. कारपोरेशन ए आई आर 1969 एस सी 363** के मामले में माननीय न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सुनवाई के मामले में विभाजित जिम्मेदारी अर्थात् सचिव के द्वारा मामले की सुनवाई की विचारधारा घातक है। इस प्रकार की प्रक्रिया से व्यक्तिगत सुनवाई के सिद्धांत का ह्रास होता है। व्यक्तिगत सुनवाई के माध्यम से सुनने वाला अधिकारी साक्षियों की गतिविधि से बहुत–सी जानकारी कर लेता है तथा सुनने के दौरान समस्त शंकाओं को भी दूर कर लेता है। यदि एक व्यक्ति सुनता है दूसरा फैसला देता है तो सुनवाई एक रिक्त औपचारिकता ही बनकर रह जाती है।

अभिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व का अधिकार (Right of represent through counsel)

पर्याप्त एवं सुसंगत विधिक न्यायपूर्ण सुनवाई की प्रत्याभूति है परन्तु यह प्रश्न न्यायपूर्ण सुनवाई के लिए वकील द्वारा प्रतिनिधित्व कहां तक उचित है, एक विचारणीय विषय है। दूसरे शब्दों में इस स्थिति पर प्रशासन का कोई स्पष्ट मत नहीं है। जहां अभिवक्ता द्वारा प्रतिनिधित्व किसी कानूनी उपबंध से वर्जित नहीं है। प्रशासी अभिकरण सामान्य रूप से इसकी अनुमति दे देते हैं लेकिन बहुत से परिनियमों या विनियमों के अंतर्गत विधिक प्रतिनिधित्व वर्जित हैं। इसका मुख्य उद्देश्य अनावश्यक व्यय को रोकना व अमीर के मुकाबले गरीब की रक्षा करना है। ऐसा करने से निर्णय में अनावश्यक विलंब नहीं होता क्योंकि अधिवक्ता के प्रतिनिधित्व से व्यर्थ तर्क–वितर्क नष्ट होता है।

किंतु जहां किसी दोषी कर्मचारी के विरुद्ध किसी घरेलू न्यायाधिकरण में जांच की कार्रवाई चल रही है वहां यदि विरोधी पक्ष से विधि कुशल व्यक्ति मामले को प्रस्तुत कर रहा है तो दोषी कर्मचारी को वकील की

सहायता लेने से इंकार करना सुनवाई के अधिकार के विरोध में माना जाएगा, विशेषकर उस स्थिति में जब संबंधित कानून विधिक प्रतिनिधित्व वर्जित नहीं है।

डाक्टर एलन का कहना है कि 'अनुभव से मैंने यह सीखा है कि ऐसे लोगों की, जो स्वयं अपनी बात कहने में असमर्थ है, किसी सुयोग अभिवक्ता से वंचित रखना, कृपा नहीं एक भूल है।'

आधुनिक विधि की जटिलताएं नियमों व विनियमों की विविधता व समूह और आसानी से उपलब्ध कराने की व्यावहारिक कठिनाईयां इस बात को दृढ़ करती हैं कि प्रशासी सुनवाई के लिए वृत्तिक सहायता की अनुमति व्यापक रूप से दी जानी चाहिए। अंग्रेजी विधि के अंतर्गत यह कहा गया है कि जहां मौखिक सुनवाई हो।

नंदलाल बनाम **पंजाब राज्य ए आई आर 1981 एस सी 2041** के मामले में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अभिवक्ता के माध्यम से अपने तर्क प्रस्तुत करने की अनुमति न देना नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन है विशेषकर उस स्थिति में जबकि दूसरे पक्षकार को अभिवक्ता करने का अधिकार प्राप्त है। इस मामले में बंदी ने अधिवक्ता द्वारा प्रतिरक्षा की अनुमति मांगी जो इंकार कर दी गई थी जबकि बोर्ड ने निरुद्ध करने वाले अधिकारी को अधिवक्ता के माध्यम से अपनी बात करने की अनुमति दे दी थी। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि बंदी को अधिवक्ता करने न देना याची के साथ प्रभेदकारी व्यवहार था, जिसके पीछे कोई औचित्य नहीं था। हालांकि बंदी को बोर्ड के समक्ष अधिवक्ता करने का अधिकार नहीं दिया गया फिर भी बोर्ड उसको विधिक सहायता के अधिकार से वंचित नहीं कर सकता जबकि सरकार को अधिवक्ता का अधिकार दे दिया गया था। बोर्ड की प्रक्रिया को इसलिए गलत और मनमाना बताया गया।

'दूसरे पक्ष को भी सुनो' के अपवाद (Exceptions to the rule of hearing)

जहां सामान्य नियम यह है कि यदि किसी व्यक्ति के नागरिक अधिकार प्रशासी कार्रवाई से प्रभावित होते हैं तो वह व्यक्ति नोटिस पाने एवं सुनवाई का अधिकारी होता है परन्तु कुछ असाधारण परिस्थितियों में इसकी आवश्यकता अपवर्जित की जा सकती है, सुनवाई के अधिकार पर एक सी परिसीमाएं या तो कानूनी प्रावधान पर आधारित हैं या लोक–नीति पर। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत कानूनी प्रावधान के महत्व को अध्यारोहित नहीं कर सकते, पर कानून अभिव्यक्त रूप से अथवा विविक्षिप्त रूप से नैसर्गिक न्याय के किसी न किसी सिद्धांत के प्रवर्त्तन को अपवर्जित कर सकता है। निम्न आधारों के अंतर्गत सुनवाई का अधिकार पूर्ण अथवा आंशिक रूप से अपवर्जित किया जा सकता है–

(अ) जहां प्राधिकारी का काम न्यायिक नहीं है।

(ब) जहां संबंधित अभिकरण के काम प्रशासी तथा वैवेकिक हैं।

(स) जहां नोटिस व सुनवाई का अवसर देने से शीघ्र कार्रवाई करने में बाधा पहुंचती है, विशेष यप से निवारक या औपचारिक ढंग की कार्रवाई।

(द) जहां प्रभावित पक्ष को सुसंगत सूचना का प्रकटन लोकहित के प्रतिकूल पड़ता है।

(ज) जहां शक्ति का प्रयोग अनुशासनिक है।

(अ) जहां अधिकारी के कृत्य न्यायिक नहीं हैं– कार्यपालिका या प्रशासी मामले सुनवाई के नियमों की आवश्यकता से मुक्त है, परन्तु न्यायिक मामले नहीं।

बंबई राज्य बनाम **के. एस. आडवानी ए आई. आर. 1950 एस सी 224** के महत्वपूर्ण वाद में न्यायालय ने अवधारणा किया कि इसमें अत्प्रेषण का आदेश जारी नहीं किया जा सकता था क्योंकि इस मामले में सरकार की कार्रवाई कार्यपालिका संबंधी या प्रशासी थी न कि न्यायिक अथवा न्याय–कल्प।

नाकुदा अली बनाम **जयरत्न ए आई आर 1951 ए सी 66** के बाद में प्रिवी कौंसिल ने निर्णय दिया कि 'दूसरे पक्ष को भी सुनो' का नियम कपड़े व्यवसायी का लाइसेंस के प्रतिसंहरण में लागू नहीं हो सकता क्योंकि लार्ड रेडक्लिफ के अनुसार वह एक कार्यपालिकीय कार्रवाई की एक विशेषाधिकार को समाप्त करने के लिए था। कहने का अभिप्राय यह है कि प्रशासी कार्रवाई केवल एक विशेषाधिकार को समाप्त करने के लिए है, पर्याप्त रूप से न्यायिक नहीं है जिसमें 'दूसरे पक्ष को भी सुनो' का नियम है–

(अ) जहां कार्रवाई, किसी अधिकार में हस्तक्षेप से भिन्न रूप में विशेषाधिकार को अस्वीकृत करने वाली हो।

(ब) जहां कोई दायित्व इस संबंध में आरोपित किया गया हो जिसमें ऐसी सुसंगत सूचना की जानकारी अपेक्षित हो, जहां पक्षकार लोकहित के विचारों से प्रतिकूल रूप में प्रभावित होता है।

(स) जहां किसी अन्य कारण से पूर्व सूचना अथवा सुनवाई का अवसर देना अव्यायवहारिक हो।

(द) जहां पूर्व सूचना अथवा सुनवाई के अवसर के प्रदान करने का कोई उपयुक्त विकल्प प्राप्त हो।

(य) जहां विधायन कुछ विशिष्ट उद्देश्यों से अभिव्यक्ति रूप में सूचना एवं सुनवाई अपेक्षित करता हो परन्तु उसमें उस उद्देश्य के लिए कोई प्रक्रियात्मक अपेक्षा न की गई हो।

(र) जहां विवादित विषय–वस्तु का मूल्य इतना तुच्छ हो कि सूचना और सुनवाई का अवसर दिया जाना औचित्यपूर्ण न होगा।

कर्नाटक सर्विस कमीशन बनाम **वी. एम विजयाशंकर ए आई आर 1992 एस सी 952** का मामला इस संबंध में बहुत महत्वपूर्ण है। इस मुकद्दमे में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि भले ही सुनवाई का अवसर दिया जाना एक अत्यंत महत्वपूर्ण बात हो सकती है फिर भी परिस्थितियां ऐसी हो सकती हैं जिनमें जनहित की प्रबल अपेक्षाएं अथवा मामले में शीघ्रता से निर्णय लिए जाने की आवश्यकताएं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को अपवर्जित कर देते हैं।

कुछ स्थितियां ऐसी हो सकती हैं जबकि नैसर्गिक न्याय को इंकार किया जाना न्याय के हितों के लिए अधिक उपयुक्त हो सकता है। इस प्रकार जहां सिविल सेवा परीक्षा का कोई अभ्यार्थी परीक्षा में अपना रोल नंबर उत्तर पुस्तिका में नियत स्थान को छोड़कर अन्यत्र लिख देता है जो कि अनुदेशों के उल्लंघन में है, जिससे कि कमीशन ने उत्तर–पुस्तिका का परीक्षण नहीं करवाया, वहां न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसे मामले में अभ्यार्थी को सुनवाई का अवसर दिया जाना आवश्यक नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षित किया कि नैसर्गिक न्याय एक ऐसी अवधारणा है जो स्वेच्छाचारिता को नियंत्रित करता है तथा विधिशासन को संरक्षित करता है किंतु इसकी अनुपालनीयता को समस्त कट्टरता के साथ यह सच है कि न्यायालय इसको उस परिस्थिति में लागू नहीं करेंगे जहां इसका अनुपालन न्याय के स्थान पर अन्याय अधिक करेगा।

भारत संघ बनाम **आनंद कुमार पांडे ए आई आर 1995 एस सी 388** के अभी हाल के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए नैसर्गिक न्याय के अपवर्जन को उचित ठहराया। इस मामले में पटना के रेलवे भर्ती बोर्ड ने पूर्वी रेलवे में गैर प्राविधिक पदों की भर्ती के लिए प्रतियोगी लिखित परीक्षा तथा मौखिक परीक्षा के आधार पर चयनित अभ्यार्थियों की सूची प्रस्तुत की किंतु बाद में एक शिकायत के आधार पर जांच के दौरान रेलवे अधिकारियों को यह पता चला कि एक परीक्षा केंद्र पर व्यापक नकल और

अनुचित साधनों का प्रयोग किया गया है। उसी आधार पर उस केंद्र से चयनित एवं सूची में प्रदर्शित अभ्यार्थियों के नाम निरस्त करके सूची से हटा दिए गए। बोर्ड ने यह निर्णय उन अभ्यार्थियों को सुनवाई का अवसर दिए बिना किया और उनको परीक्षा में पुनः सम्मिलित होने का निर्देश दिया। उपरोक्त परिस्थितियों में रेलवे बोर्ड द्वारा अभ्यार्थियों को बिना सुने चयनित सूची से निरस्त करने के निर्णय को न्यायालय ने वैध एवं उचित अभिनिर्धारित किया तथा यह कहा कि ऐसे तथ्यों के संदर्भ में नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन नहीं माना जाएगा।

कभी–कभी अचानक ऐसी गंभीर परिस्थितियां सामने आ जाती हैं जिनमें सुनवाई या नोटिस का प्रावधान औपचारिक कार्रवाई के उद्देश्य ही समाप्त कर सकता है। परिस्थितियों में तुरंत कार्रवाई की आवश्यकता होती है। युद्धकाल में कानून प्रशासनिक प्राधिकारियों को विशेषाधिकार प्रदान करता है जिससे वे लोग सुरक्षा संबंधी मामलों संदिग्ध आचरण वाले अपराधियों के विरुद्ध तुरंत कार्रवाई कर सकें। ऐसे अपराधियों के लिए भी यदि नोटिस एवं सुनवाई की व्यवस्था की जाएगी तो फिर प्रदत्त विशेषाधिकार निरर्थक हो जाएगा।

डावरसिज बनाम **एंडरसन प्रमुख अंग्रेजीबाद ए. आई. आर. 1942 ए सी 206** इस संबंध में उल्लेखनीय हैं। इस वाद में 'हाउस आफ लार्डस' ने निर्णय दिया कि चूंकि सुरक्षा के लिए त्वरित निरोधक कार्रवाई की आवश्यकता थी, इसीलिए न्यायालय निरोधक कार्रवाई के औचित्य की जांच न कर सका। लार्ड मेहम ने अवधारण किया कि इस मामले में राज्य–सचिव किसी विधिक कर्तव्य से बाध्य नहीं था कि संबंधित पक्ष को नोटिस देता या सुनवाई का अवसर प्रदान करता।

भारत में त्वरित कार्रवाई करने की आवश्यकता पर न्यायलय ने यह संप्रेक्षण किया है कि प्रशासनिक प्राधिकारियों को जो अतिरिक्त अधिकार प्रदान किए जाते हैं, विधिमान्य है। यदि वे व्यक्तिगत रूप से संतुष्ट है तो सुनवाई की आवश्यकता नहीं है,

उदाहरणार्थ :

(अ) किसी खतरनाक भवन को ध्वस्त करना

(ब) खातेदारों को बचाने के लिए किसी बैंक अधिकारी कंपनी का परि समापन करना

(स) शांति–भंग के परिरक्षण के लिए किसी अभियोजन या सभा को रोकना

(द) किसी व्यवसायी या उप जीविका को रोकना या विनियमन करना जिससे समुदाय को खतरा हो।

रामेश्वर लाल बनाम **राजस्थान राज्य ए. आई. आर. 1997 राजस्थान 213** के वाद में उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यदि जिला अधिकारी लोक हित को ध्यान में रखते हुए कोई लाइसेंस रद्द कर देता है, और लाइसेंस में दी गई छूट को वह समाप्त कर देता है तो ऐसी परिस्थिति में सुनवाई का अधिकार लाइसेंस धारक को देना कोई आवश्यक नहीं है।

दूसरी ओर जहां शांति–भंग के तुरंत रोकने की आवश्यकता नहीं है जैसे–किसी विशेष क्षेत्र में किसी साहित्य के प्रकाशन को रोक देना उच्चतम न्यायलय ने अभिनिर्धारित किया कि ऐसा कानून जो कार्यपालिका प्राधिकारी या सरकार को उसकी व्यक्तिगत संतुष्टि पर अतिरिक्त अधिकार प्रदान करता है और संबंधित पक्ष को अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर नहीं देता तो ऐसा प्रतिबंध अनुचित प्रतिबंध कहा जाएगा, क्योंकि इससे अनुच्छेद 19 (1) द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकार पर आक्षेप आता है। किंतु कुछ ऐसी स्थितियां हो सकती हैं। जिसमें लोकहित के आधार के गुण व अवगुणों पर न्यायालय जांच कर सकती है।

जसवंत बनाम **पंजाब राज्य ए आई आर 1991 एस सी 385** के मामले में न्यायालय ने यह कहा कि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 311 के खंड (ब) के परन्तुकों में सुनवाई के अवसर को लोकहित के अथवा

अव्यावहारिकता के मामले में उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा अपने व्यक्तिगत समाधान के आधार पर न दिया जाना एक ऐसी स्थिति है जिनका न्यायिक पुनर्विलोकन करवाया जा सकता है। ऐसा प्राधिकारी यह प्रदर्शित करने के लिए बाध्य किया जा सकता है कि वह बताए कि उसका व्यक्तिगत समाधान वस्तुनिष्ठ बातों पर आधारित है। प्रस्तुत मामले में न्यायालय ने सेवा से निकाले जाने के आदेश को इसलिए निरस्त कर दिया कि उसे ऐसी कोई सामग्री नहीं मिली जिसके आधार पर जांच को अनावश्यक करार कर दिया जाना उचित होता।

यह प्रख्यात किया गया है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का एक अंग यह भी है कि पक्षकार के निर्णय के अतिरिक्त कारणों को जानने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में पक्षकार निर्णय का कारण जानने का अधिकारी है, चाहे वह न्यायिक हो या न्यायिक–कल्प।

मानव कुमार मित्रा बनाम **उड़ीसा राज्य व अन्य ए आई आर 1997 उड़ीसा 52** के बाद में उड़ीसा उच्च न्यायालय ने यह संप्रेक्षित किया कि किसी भी वाद में जो निर्णय किया जाए, वह स्पष्ट और तर्कानुमोदित होने चाहिए क्योंकि कोई भी तर्कानुमोदित निर्णय किसी वनिश्चय की आत्मा होती है, तर्क सहित न्याय देना किसी न्यायिक पुनर्विलोकन का अभिन्न अंग माना जाता है। तर्कानुमोदित विनिश्चय किसी निर्णय को मनमानापन तथा अन्याय करने से रोकती है तथा एक सुरक्षा कवच प्रदान करती है। अतः यह कहा जा सकता है कि तर्कानुमोदित विनिश्चय एक अच्छे प्रशासन का मूलभूत सिद्धांत है।

मेसर्स हरीनगर चीनी मिल्स लिमिटेड ए आई आर 1992 एस सी आर 339 बनाम **श्याम सुंदर** के बाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि सांविधानिक प्रकार की कार्रवाई में संबंधित प्राधिकारी द्वारा कारण बताना आवश्यक है। उस बाद में केंद्रीय सरकार ने कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 111 के अंतर्गत अपने अधिकार का प्रयोग करते हुए कंपनी के निदेशकों के प्रस्ताव को रद्द कर दिया। कोर्ट ने वह निर्धारित किया कि प्राधीकरण कारण बताने के लिए बाध्य नहीं था न्यायाधीश ने निर्णय दिया कि केवल तथ्य कि कार्रवाई गोपनीय है, निर्णय की आवश्यकता को समाप्त नहीं करती और न ही आदेश के समर्थन में साक्ष्य व पर्याप्त आधार को प्रकट करने से रोकती है।

आपराधिक विधि संशोधन अधिनियम की धारा 4 के अंतर्गत प्रादेशिक सरकारों को अधिकार है कि, वह किसी समाचार पत्र व पुस्तक को, कारणों की व्याख्या करते हुए जब्त कर सकती है यदि सरकार की दृष्टि में व समाचार पत्र व पुस्तक भारत की प्रादेशिकता अखंडता को इस प्रकार प्रभावित करती है जिससे भारत की रक्षा व सुरक्षा के लिए भय हो।

अभ्यार्थी की एक पुस्तक सरकार के आदेश द्वारा बिना कोई कारण बताए जब्त की गई। उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि आदेश पारित करते समय उपयुक्त प्रावधान की पुनरावृत्ति हुई है और यह कानूनी प्रावधान का पर्याप्त परिपालन है। उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय का आदेश उलट दिया और निर्णय दिया कि आदेश के समर्थन में कारण देना आवश्यक था।

भारतीय संघ बनाम एल. एम कपूर में उच्चतम न्यायालय ने उक्त निर्णय की पुष्टि की कारण युक्त निर्णय देने की पुष्टि की है। यहां अभ्यार्थी का नाम प्रोन्नति की सूची में भारतीय पुलिस सेवा (प्रोन्नति द्वारा नियुक्त) परिनियम 1955 के अतंर्गत था। सूची में नाम 1967 तक रहा, परन्तु 1968 में नाम कट गया। चयन की कार्रवाई में समिति यदि किसी सिविल सेवा के सदस्य को उसे हटाकर पदोन्नति करना चाहती है तो समिति को उसका कारण प्रकट करना चाहिए। अभ्यार्थी को अतिष्ठित करने का मुख्य कारण यह था कि अभिलेखों की छानबीन के पश्चात इस निश्चय पर पहुंचा गया कि वे भारतीय पुलिस सेवा की नियुक्ति के लिए उपयुक्त नहीं थे। उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि

रबर स्टांप कारणों का आधार लेते हुए एक दूसरे के अनुकूल या प्रतिकूल निर्णय लेना पर्याप्त कारण नहीं समझा जा सकता। न्यायालय ने निर्णय दिया कि चयन--समिति को कारण स्पष्ट करना अनिवार्य था कि उसने अभ्यार्थी को क्यों अतिष्ठित कर दिया और किस प्रकार उसे अतिष्ठित किया गया।

'दूसरे पक्ष बात सुनो' की भांति नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का एक मूल सिद्धांत हो गया है। इसका सारतः प्रतिपालन किसी न्यायिक–कल्प कार्रवाई, में आवश्यक है इसका केवल औपचारिक पालन विधिक आवश्यकता की पूर्ति नहीं करते।

अब इस बात में तनिक भी संदेह नहीं रहा कि सभी प्रशासनिक आदेश नैसर्गिक न्याय के अनुकूल हों और जहां नैसर्गिक न्याय का अनुपालन नहीं किया जा सकता वहां औचित्यता के आधार पर आदेश पारित किया जाए। अंत में यह कहना सर्वथा उचित होगा कि न्यायिक कल्पनिकायों के लिए कारण बताने की आवश्यकता पहले की अपेक्षा अधिक हो गई है, तथा इसे काफी समर्थन प्राप्त होगा।

❐

महिला का प्रथम उत्पीड़न (लिंगानुपात में घटती महिलाएं : कन्या भ्रूण हत्या)

डा. जयश्री एस. भट्ट

रिसर्च एशोसिएट,
समाजशास्त्र एवं समाज विभाग
डा. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, (म.प्र.)

(हमारी संस्कृति पूर्व जन्म एवं कर्म सिद्धांतों पर आधारित है इसके बाद भी लिंगानुपात में घटती महिलाओं के आंकड़े सिद्ध कर रहे हैं कि कन्या भ्रूण हत्या एवं शिशु हत्या करवा कर प्रकृति प्रदत्त नियमों की अवहेलना की जा रही है, जो हमारे सांस्कृतिक मूल्यों पर कुठाराघात है। इस दूषित प्रवृति को रोकने के लिए लिंगानुपात में अंतर के आंकड़ों का विश्लेषण कर उनके कारणों, प्रभावों पर विचार करते हुए बालक एवं बालिकाओं की जनसंख्या पर संतुलन बनाए रखने के लिए कौन-कौन से प्रयास किए जा रहे हैं एवं किए जा सकते हैं, पर विचार कर उस चेतना को जगाने की कोशिश की है, जो हमारी हजारों वर्षों की तपस्या का अर्जन है।)

प्रस्तावना :

कन्या जन्म की स्थिति

पूर्व वैदिक काल में ऋग्वेद की पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पुत्र का स्थान सर्वोपरि था। ऋग्वेद ब्राह्मणों में एक बार भी पुत्री प्राप्ति की कामना नहीं की गई। जबकि पुत्र प्राप्ति की कामना का उल्लेख अनेक जगह हुआ है। ऋग्वेद (10-85) में इन्द्र से वधू को दस पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना की गई है। मैकडोनल का कथन भी ठीक प्रतीत होता है कि वास्तव में ऋग्वेद में पुत्रियों के लिए कोई स्थान नहीं है जहां पुत्र के जन्म के समय तालियां बजाकर हर्षध्वनि की जाती थी वहीं पुत्री के जन्म पर ऐसा उल्लास देखने को नहीं मिलता (वैदिक रिलिजन, पृ. 164)। वही अथर्ववेद में पुत्रोत्पत्ति के लिए तो मंत्र थे ही साथ में कन्या के जन्म को रोकने के लिए प्रार्थना तथा धार्मिक कृत्य भी किए जाते थे (अथर्ववेद 6/11/3, 1/14/2)। इसप्रकार पूर्व वैदिक काल में पुत्र जन्म के लिए प्रार्थना करना पुत्र तथा पुत्री के मध्य असमानता प्रदर्शित करता है।

उत्तर वैदिक काल की अवधि साधारणतः 1400 ई. पूर्व से 600 ई. पूर्व तक मानी जाती है। अर्थात् ऋग्वैदिक काल के अंत एवं बौद्ध तथा जैन धर्म ग्रन्थों के आरंभकाल के बीच का समय माना जाता है।[1] इस समय वर्ण व्यवस्था ने कर्म के स्थान पर जन्म पर आधारित हो जाति व्यवस्था का रूप धारण कर भारतीय समाज को कमजोर कर दिया था। हरिदत्त वेदालंकार ने अपनी पुस्तक हिंदू परिवार मीमांसा में लिखा है कि ब्राह्मण काल में ब्राह्मणों का प्रभुत्व बढ़ जाने से यज्ञों का आडंबर एवं कई कुप्रथाओं का जन्म हुआ, जिसमें स्त्रियों का मासिक धर्म, कर्म कांड की जटिलता, अंतर्जातीय विवाह एवं स्त्रियों का उपनयन के अभाव में शुद्ध नहीं समझा जाना बताया गया है। दूसरी तरफ कन्यादान से बड़ा दान कोई नहीं माना जाने लगा। इस प्रकार हर तरह के षड्यंत्र एवं चाल स्त्रियों का स्तर गिराने के लिए ब्राह्मण काल में चली गई एवं पुत्र के महत्व को बढ़ाने के लिए कहा गया कि पितृऋण से मुक्ति के लिए पुत्र प्राप्ति आवश्यक है (41ऋ. 10.85.42.44.46) एवं नारद हरिशचंद्र ने कहा था कि पत्नी एक साथी है पुत्री एक विपत्ति है पुत्र सर्वोच्च स्वर्ग का प्रकाश है।[2] ऐसे विचारों

से पुत्र की लालसा इतनी बढ़ गई कि तैत्तिरीय संहिता के अंश के आधार पर जिमर ने यह मत प्रतिपादित किया था कि नवजात पुत्री को बहुधा फेंक दिया जाता था। किंतु उस अंश का वास्तविक आशय यह है कि हर्षातिरेक के कारण मनुष्य उत्पन्न हुए पुत्र को तो उठा लेता था, परंतु कन्या होने के कारण वह उसको एक ओर पृथ्वी पर रख देता था। इस प्रकार कन्या के वहिःक्षेप का कोई उल्लेख नहीं है।[3] कुछ विद्वान जैसे वैस्टरमार्क, डेल बुडक, जिमर, बेवर एवं रजवाड़े, वैदिककाल में कन्यावध की प्रथा भी मानते थे, किंतु इनके प्रणाम संदिग्ध एवं अनिश्चयात्मक है (तै. स. 6/1/6/5)।

यज्ञों, कर्मकांडों और ब्राह्मणों के प्रभुत्व के विरोध में ही एक नई विचारधारा का उदय हुआ जिसे उपनिषद कहते हैं। विद्वानों का मानना है कि उपनिषद 600 ई. पूर्व ईसा से भी पूर्व के और ये ब्राह्मण ग्रन्थों के समकालीन माने जा सकते हैं।[4] उपनिषद में कहा गया है कि प्रकृति यही चाहती है कि पुत्रों के साथ पुत्रियों का भी जन्म होता रहे अन्यथा सृष्टि का आवर्तन ही रुक जाएगा। अतः प्रकृति पर आधारित संस्कृति कन्या दोषी कैसे हो सकती है। विदुषी पुत्री पाने की इच्छा करने वालों के लिए चावल और तिल की घृत युक्त खिचड़ी खाने का विधान किया गया है (बृ. उ. 4/6/17)। वृहदारण्यक उपनिषद में विदुषी (पंडिता) कन्या प्राप्त करने के लिए विशेष अनुष्ठानों की योजना का उल्लेख मिलता है (वृह उप. 6.4.17)। कन्याओं के लिए भी प्रार्थना की जाती थी यह इतिहास में पहली बार मिला।

वैदिक काल के अंतिम चरण 200 ई. पू. से बौद्ध, मौर्य, मौर्योत्तर एवं गुप्तकाल तक पुत्र की अपेक्षा पुत्री को हीन मानते थे। पूर्व मध्य युगीन भारतीय समाज में राजपूतों का प्रभुत्व था। राजपूत इतने स्वाभिमानी होते थे कि उनमें कईयों के यहां कन्या का जन्म होते ही उसे मार दिया जाता था। यह प्रथा बहुतायत से चल पड़ी थी क्योंकि घर में कन्या के होने से उसके विवाह के समय लड़के वालों के सामने हीनता का बोध होता था।[5] राजपूत राजाओं ने अपने राज्यों की सीमा बढ़ाने एवं स्त्रियों को लेकर अपने शौर्य का प्रदर्शन करने तथा नारी के सौंदर्य पर रीझकर उसे पाने के लिए लाखों की संख्या में सैनिकों को वे कटवा डालते थे। इन्हीं वैमनस्य और संघर्षों के कारण आठवीं शताब्दी से ही भारत में मुसलमानों के आक्रमण होने लगे सोलहवी शताब्दी तक वे भारत में गतिशील हुए और 19वीं शताब्दी तक अपनी चरम सीमा तक पहुंच गए परंतु वे अपने साथ स्त्रियों को लेकर नहीं आए थे अतएव नारी को जीवन पाने के क्षण से लेकर जीवन के अंतिम क्षण तक विदेशी आक्रांताओं के हाथ में पड़ने का भय बना रहता था। आक्रमणकारियों से रक्षा में असमर्थ होने पर कन्या को जन्म के समय मार देने की परंपरा भारत ने भी अपना ली जिसके अनेक प्रमाण इस युग में मिलते हैं। लेखक लूनिया ने अपनी पुस्तक "इवोल्यूशन आफ इण्डियन कल्चर" में लिखा है कि विदेशी आक्रमणों के कारण मध्यकालीन भारतीय समाज में नारी की सामाजिक स्थिति जितनी गिरी उतनी उसके पूर्व हजारों वर्षों में नहीं। कन्या जन्म अत्यंत दुख का कारण माना जाता था कुछ कन्याएं तो पैदा होते ही मार दी जाती थीं[6] एवं जो कन्या बच जाती थीं उसका लालन-पालन चार दीवारों के अंदर होता उसकी रक्षा के नाम पर उसे पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा आदि कुप्रथाओं से जकड़ लिया। ब्रिटिश राज्य की स्थापना के पश्चात् कानून व्यवस्था संभली जिससे असुरक्षा की भावना समाप्त हुई एवं कुप्रथाओं की जगह वैज्ञानिक सोच तथा तर्क शक्ति ने ली जिससे प्रभावित हो अनेक महिलाएं जैसे लक्ष्मीबाई, बेगम हजरत आदि ने स्वतंत्रता की कमान संभालते हुए आंदोलनों में पुरुषों के साथ भाग लेते हुए अकेले देश को ही स्वतंत्र नहीं किया बल्कि अपनी खोई पहचान को फिर से कायम किया एवं आधुनिक युग का सृजन किया।

आज विश्व बहुत तेज गति से आर्थिक, सामाजिक

और राजनैतिक क्षेत्रों में प्रगति के साथ-साथ नवीन वैज्ञानिक आविष्कारों एवं संसाधनों की ओर जैसे-जैसे बढ़ता जा रहा है वैसे-वैसे दहेज की सूची एवं शादी में शान-शौकत दिखाने का आडंबर भी बढ़ता जा रहा है जिससे लड़के वाले लड़कियों के शहर में बारात लेकर जाते थे परंतु अब लड़के वाले स्वयं अपने शहर में दुल्हन वालों को बुलाकर शादी की रस्म अदा करते हैं। जिससे लड़के वाले शादी के अन्य खर्चों में अपने आप को बचा लेते हैं। इस प्रकार लड़की वालों पर शादी का खर्च बढ़ता ही जा रहा है। जिससे व्यक्ति कन्या को बोझ समझने लगा है। इसके साथ-साथ टेलीविजन, इंटरनेट एवं मोबाइल आदि आविष्कार भी महिलाओं का दुरुपयोग कर रहे हैं, जो हमारी संस्कृति एवं आचार-विचार से बिल्कुल विपरीत है, क्योंकि नारी का सौंदर्य हमारी संस्कृति में हमेशा पावनता का प्रतीक रहा है। यदि हम इस सौन्दर्य को केवल देहबोध और देह की सीमा में ही आंकने की चेष्टा करेंगे तो हमारी सोच मलिन और क्लेशपूर्ण होगी ही, यही वजह है कि हमारे चारों तरफ सांस्कृतिक पराभाव हो रहा है। जिसके कारण महिलाएं असुरक्षित हो रही हैं। इस प्रकार किसी भी देश की उन्नति/अवनति या जनसंख्या को नियंत्रित करना ही क्यों न हो इन सबका प्रभाव सबसे पहले महिलाओं पर ही पड़ता है मध्यकाल में स्त्रियों की सुरक्षा न कर पाने के कारण कन्या वध की परंपरा निकली तो आधुनिक युग में स्वयं के स्वार्थवश कन्या को बोझ समझकर कन्या को जन्म से पहले ही मार देने की प्रथा कायम हो गई। कन्या भ्रूण को मां के गर्भ में जच्चा-बच्चा के खतरनाक स्थिति में न होने के बाद भी बिना वजह मार देने को कन्या भ्रूण हत्या कहते हैं। कितनी विडंबना है इंसान स्वयं अपने स्वार्थवश प्रथाएं बनाता है और फिर उसी से बचने के लिए भी नई प्रथाएं कायम कर देता है। जैसे कन्यादान प्रथा महान दान के रूप में किसी इंसान ने ही बनाई होगी उसी प्रकार भौतिक सुख-सुविधाओं के स्वार्थवश कन्यादान प्रथा के साथ दहेज प्रथा भी निकालकर स्वयं फस गया एवं इस प्रथा से बचने के लिए प्रकृति से खिलवाड़ कर विज्ञान का दुरुपयोग कर कन्या को कोख में आने ही नहीं देता कि दान का खर्च करना पड़ेगा। सवाल ये उठता है कि ऐसी प्रथा ही क्यों बनाई कि मानव को प्रकृति के विरुद्ध जाना पड़े?

पश्चिमी देशों में गर्भस्थ शिशु का लिंग परीक्षण लगभग 30-35 सालों से हो रहा है लेकिन वहां उनका उद्देश्य गर्भस्थ शिशु की विकृतियों का पता लगाना था परंतु भारत में अमृतसर से ये सिलसिला शुरू हुआ और धीरे-धीरे पूरे भारत में फैल गया। इस जांच में यदि मादा शिशु पाया जाता है तो इस बात की संभावना अधिक रहती है कि उसकी हत्या कर दी जाएगी। इस प्रकार स्त्री के प्रति हिंसा का सिलसिला उसके जन्म से पहले शुरू हो जाता है जो कि महिला उत्पीड़न का प्रथम रूप है। जबकि जीव विज्ञान के अनुसार बालिका शिशुओं में प्रतिरोधक शक्ति अधिक होती है अतएव बालिका शिशुओं की मृत्यु बालक शिशुओं की तुलना में कम होती है किंतु इसके बाद भी पांच साल से कम उम्र में मृत्यु दर प्रति हजार बालक/बालिका में 78/90 है। इस प्रकार छः वर्ष से कम उम्र के आबादी वाले बच्चों के अनुपात को हम शिशु लिंग अनुपात कहते हैं। लिंग अनुपात में तेजी से हुई गिरावट की असमान प्रवृत्ति के आंकड़ों का विश्लेषण का कारणों एवं इसके प्रभावों को जानकर इसके निराकरण की खोज करना ही इस शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य है।

विश्व में स्त्री/पुरुष लिंगानुपात के आंकड़ों का विश्लेषण

विश्व में लिंगानुपात 1000 पुरुषों पर 986 महिलाओं का है। इंडोनेशिया में प्रति हजार पुरुषों पर 1004 महिलाएं, ब्राजील में 1000:1025, जापान में 1000:1041 तथा नाइजीरिया में 1000:1016 महिलाएं हैं।[8] दक्षिण एशिया, पश्चिम एशिया, चीन, उत्तर अफ्रीका

में प्रति वर्ष मोटे तौर पर 6 करोड़ बालिकाओं का जन्म से पूर्व भ्रूण की स्थिति में या पैदा होते ही नष्ट कर दिया जाता है।[9] इस स्थिति को देखकर चीन में कन्या भ्रूण हत्या और नवजात शिशु हत्या की घटना को जघन्य अपराध मानकर इसके खिलाफ कड़े दंड का प्रावधान रखा गया है जिससे महिला पुरुष के लिंगानुपात में संतुलन आया है। 1981 में चीन में 108 पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 100 थी वह बढ़कर 1986 में 110 एवं 1989 में 114 हो गई।[10] परंतु हाल ही में चीन में हुए सर्वे रिपोर्ट में 100 लड़कियों पर 134 लड़के बताए गए हैं।[11] वहीं द्वितीय विश्व युद्ध के बाद यूरोप के देशों में पुरुषों की संख्या में कमी हो जाने के बावजूद अब यहां लिंगानुपात में संतुलन कायम है। लेकिन एशिया के विकासशील देशों में ही महिला-पुरुष अनुपात में काफी कमी आई है। संयुक्त अरब अमीरात में 100 पुरुष पर महिलाओं की संख्या पहले से ही कम होकर 48 हो गई है।[12]

भारत में स्त्री/पुरुष लिंगानुपात के आंकड़ों का विश्लेषण

विश्व में अध्ययन के जरिए विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने यह तथ्य पाया है कि जिन देशों में महिलाएं इस तरह से गुम हो रही हैं उस सूची में भारत का स्थान ऊपर है। विश्व स्वास्थ्य संगठन तथा इंडियन मेडीकल एसोसियेशन (आई. एम. ए.) के अध्ययन से पता चला है कि हमारे देश में प्रतिवर्ष औसतन 20 लाख कन्या भ्रूणों को नष्ट कर दिया जाता है।[13] इस प्रकार 1981 से लेकर 2001 तक इन बीस सालों में करीब छह करोड़ महिलाएं लुप्त हो गई हैं। दस वर्षों पर होने वाले जनगणना के पिछले 100 वर्ष के आंकड़ों को देखने से पता चलता है कि वर्ष 1900 में भारत में एक हजार पुरुषों पर महिलाओं की संख्या 972 थी 1961 में यह अनुपात

तालिका क्रमांक — 1

भारत के विभिन्न राज्यों में लिंगानुपात

राज्य	**स्त्री-पुरुष** (लिंग अनुपात)	**शिशु** (लिंग अनुपात)
भारत	933	927
राजस्थान	922	906
मध्यप्रदेश	920	929
हरियाणा	861	820
गुजरात	921	878
पंजाब	857	793
बिहार	921	938
चंडीगढ़	773	845
उत्तरप्रदेश	898	916
उत्तरांचल	964	906
छत्तीसगढ़	990	975

स्त्रोतः जनगणना– सन् 2001 (दै. भा.)[15]

भारत की जनसंख्या	पुरुष	स्त्रिया	स्त्रियों में कमी
102-7 (करोड़)	53.1 (करोड़)	49.6 (करोड़)	3.5 (करोड़)

1000 : 941 था। 1991 में अनुपात 1000 : 927 और 2001 में 1000 : 933 है। पिछले दस वर्षों में इस अनुपात में सुधार आया है लेकिन इस पर संतोष नहीं किया जा सकता।[14]

तालिका क्रमांक-1 के अनुसार पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़, गुजरात जैसे समृद्ध राज्यों में तो शिशु लिंग

अनुपात तेजी से गिरा है चंडीगढ़ पंजाब एवं हरियाणा में महिलाओं का अनुपात तो राष्ट्रीय स्तर से भी कम हो गया है। समृद्धशाली पंजाब में यह अनुपात प्रति हजार पर 793 रह गया है जबकि 1991 में यह 875 था। वैसे ही हरियाणा के 'लोवर शिवालिक फुट हिल्स' के गांवों जिनमें 'सुखोमाजरी बुंगा, घमाला, गोविंदपुर, मंडपा आदि शामिल हैं वहां 1000 पुरुषों पर मात्र 759 से 818 स्त्रियां और अन्य गांवों में जैसे आसरवाली और टिवी 852 से 887 तक महिलाएं हैं। सुखोमाजरी क्षेत्र में तो 1000 पुरुषों पर मात्र 750 स्त्रियां रह गई हैं जो राष्ट्रीय अनुपात 927 से बहुत कम है।[16] जनगणना आयुक्त

तालिका क्रमांक — 2

10 लाख से ज्यादा आबादी वाले शहरों में लिंगानुपात

शहर	सन् 1991	सन् 2001	कमी
अमृतसर	862	781	81
लुधियाना	867	819	48
राजकोट	909	821	88
अहमदाबाद	894	822	72
सूरत	921	827	94
बड़ोदरा	914	833	81
फरीदाबाद	902	848	54
आगरा	894	854	40
कानपुर	941	855	86
मेरठ	928	859	69

स्त्रोत : – सहारा समय – 23 अप्रैल 2005 (मदन जैड़ा) (प्रति हजार पर)

तालिका क्रमांक—2 के अनुसार 1991 से 2001 तक अर्थात पिछले एक दशक में सूरत, राजकोट, कानपुर, अमृतसर एवं बड़ोदरा में एक हजार बालकों पर बालिकाओं की संख्या में 80 से अधिक की कमी आई है।

तालिका क्रमांक — 3

भारत में सबसे खराब लिंग अनुपात वाले जिले

जिले	लिंग अनुपात (प्रति हजार पर)	जिले	लिंग अनुपात (प्रति हजार पर)
फतेहगढ़ साहिब	754	अमृतसर	785
पटियाला	770	गुरदासपुर	775
कपूरवाला	775	कुरुक्षेत्र	770
भटिंडा	779	सोनीपत	783
मानसा	779	अंबाला	784

स्त्रोत : सहारा समय– 23 अप्रैल 2005 (मदन जैड़ा)

कार्यालय ने हाल में 10 लाख से ज्यादा आबादी वाले देश के चुने हुए 35 शहरों में लड़का-लड़की अनुपात का विश्लेषण किया जो नीचे तालिका क्रमांक–2 में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक – 3 के अनुसार पूरे भारत में फतेहगढ़ साहिब पंजाब का एकमात्र जिला है जहां सबसे कम 1000 पुरुषों में 754 महिलाएं हैं। भारत के रजिस्ट्रार एवं आयुक्त कार्यालय में संयुक्त निदेशक सुमन पाराशर कहती हें कि अगर गांवों और शहरों के अनुपात को अलग-अलग किया जाए तो यह और भी

तालिका क्रमांक – 4
धर्म के आधार पर लिंग अनुपात

धर्म (1991-2001)	**जनसंख्या वृद्धि दर**	**साक्षरता** (प्रति हजार पुरुषों पर)	**लिंग अनुपात**
सिख	16.9%	69.4%	893
हिंदू	20.3%	65.1%	931
मुस्लिम	29.3%	59.1%	936
जैन	26.0%	94.1%	940
बौद्ध	23.2%	72.7%	953
ईसाई	20.1%	80.3%	1009

स्त्रोत : दैनिक भास्कर– 15 सितंबर 2004

चिंताजनक है। शहरों में एक हजार बालकों पर 906 बालिकाएं रह गई हैं। गांवों में यह कुछ बेहतर 934 है।[17] अर्थात् जिन राज्यों में शहरीकरण बढ़ रहा है वहां कन्याएं भी घटती जा रही हैं।

तालिका क्रमांक – 4 के अनुसार ईसाईयों के बाद बौद्ध एवं जैन में ही पुरुषों के मुकाबले महिलाओं का अनुपात तेजी से नहीं घट रहा है। सबसे ज्यादा कमी सिखों में आई है जिसमें प्रति हजार पुरुषों पर 893 औरतें रह गईं हैं। हिंदूओं में यह संख्या 931, जैन और बौद्ध में 940 तथा 953 रह गईं है तथा मुस्लिम में 936। उपरोक्त आंकड़ों से स्पष्ट है कि लिंगानुपात में स्त्रियों की संख्या घट रही है।

लिंग अनुपात में घटती महिलाओं का कारण : कन्या भ्रूण हत्या

भारत में लिंग अनुपात स्त्रियों के विरुद्ध जाने का मुख्य कारण एम्नियोसेंटेसिस अल्ट्रा सोनोग्राफी एवं कोरियान विलस बायोप्सी तकनीकों द्वारा गर्भ में पल रहा भ्रूण कन्या का पता कर गर्भपात कराना है। स्टेट ऑफ वर्ल्ड पापुलेशन रिपोर्ट 1997 के अनुसार प्रतिवर्ष कम से कम 4.5 करोड़ गर्भो का गर्भपात कर दिया जाता है उसमें से भी लगभग 2.0 करोड़ गर्भपात असुरक्षित एवं जोखिम युक्त होते हैं। इस प्रकार हमारे देश में सालाना छह से आठ लाख गर्भपात होते हैं।[18] डब्ल्यू. एच. ओ. का आकलन है कि दुनिया भर में होने वाले 11 फीसदी अवैध गर्भपात भारत में होते हैं। भारत में हर साल तीन करोड़ महिलाएं गर्भधारण करती हैं जिनमें से 2.70 करोड़ महिलाएं ही बच्चों को जन्म दे पाती हैं लेकिन इनमें से दस फीसदी बच्चे अपना पांचवां जन्म दिवस नहीं

मना पाते हैं दुनिया में एक करोड़ पांच साल की उम्र पार नहीं कर पाते जिसमें 25 फीसदी बच्चे भारत के होते हैं।[19] एबार्शन एस्सेसमेंट प्रोजेक्ट ऑफ इंडिया की रिपोर्ट है कि मुंबई में प्रति एक हजार विवाहित महिलाओं में 107 महिलाएं सोनोग्राफी के जरिए गर्भस्थ शिशु के कन्या होने की पुष्टि के बाद गर्भपात करा लेती हैं। यह उनका नहीं बल्कि ससुराल वालों और मायके के लोगों का फैसला होता है।[20] दक्षिण दिल्ली में एक हजार लड़कों पर लड़कियों की तादाद महज 712 है पूरी दिल्ली की बात करें तो 865 है यहां भी गर्भपात की संख्या बढ़ी है। दिल्ली में 1804 जगहों पर अधिकृत अल्ट्रासाउन्ड सुविधा मौजूद है जिसमें से 76 को गड़बड़ी करते हुए स्वास्थ्य विभाग ने पकड़ा। इसी प्रकार ग्वालियर जिले में एक अप्रैल 2001 में 31 मार्च 2002 तक 2429 गर्भपात हुए हैं।[21]

कन्या शिशुओं की हत्या

राजपूतों में नवजात कन्या को मारने की जो प्रथा चली थी वो धीरे-धीरे ब्राह्मणों, सिखों, कायस्थों एवं दलित बिरादरियों में फैल रही है बिहार के कटिहार जिले में तकरीबन 1200 बच्चियों की यह दुर्गति होती है पूरे बिहार में लगभग 15000 दाइयां इसी जघन्य कुकृत्य में लगी हुई हैं।[22] जो दाईयां जीवन देती थी वही इस कलयुग में जीवन लेने का काम कर रही हैं। मध्यप्रदेश के भिंड जिले में गुज्जर बहुल एक गांव है खरूआ जहां आर्थिक रूप से संपन्न किसान एवं ठाकुरों का वर्चस्व है यहां नवजात बच्चियों को मृत घोषित कर चारपाई से उसका सिर कुचलकर एवं मुंह में तंबाकू रखकर जान से मार दिया जाता है। यहां लड़कियां न के बराबर हैं इस इलाके के ठाकुरों का कहना है कि लड़कियों को ब्याहते समय आर्थिक बोझ तो सहना पड़ता ही है साथ ही समधियाने के परिवार के सामने पगड़ी भी नीची होती है।[23] आजकल हर न्यूज पेपर में आए दिन हमें पढ़ने को मिल ही जाता है कि बेटे की चाह में बेटियों का गला काट कर हत्या कर दी तो दूसरी मंजिल से बच्ची को नीचे फेंक दिया। (दै. भा.– 10 अक्टूबर 2005 पृ. 3, 22 अप्रैल 2003 पृ. 13) एक समाचार के अनुसार तो अलीगढ़ में सोनोग्राफी से गर्भ में बेटी का पता लगने के बाद एक व्यक्ति ने अपनी पत्नी को गोली मार दी। (दै. भा.– 22 जुलाई 2005, पृ. 4) इन सब घटनाओं से यह तो सिद्ध हो जाता है कि भारतीय समाज में स्त्रियों के प्रति अंतरमन से न सम्मान बचा है न संवेदनाएं।

कन्या भ्रूण एवं शिशु हत्या से जो कन्याएं बच भी जाती हैं। उन्हें अस्पताल के बाहर या रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म पर त्याग दिया जाता है। (दै. भा.– 9 अक्टूबर 2005, पृ. 15) या फिर उनका पालन पोषण इस प्रकार से किया जाता है कि बच्चियां कुपोषण का शिकार हो काल का ग्रास बन जाती हैं। इस तरह स्त्रियों के प्रति भारत की मानसिकता को देखते हुए कन्या भ्रूण हत्या एवं कन्याओं की हत्या किए बिना ही व्यक्तियों की तमन्ना को पूरा करने एक और खोज अमेरिका के स्टेट यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने निकाल ली है जिसमें एरिक्सन से एक्स-वाई गुण सूत्रों को पहचानकर एक सेकेंड में छांट लिए जाते हैं उसे स्त्री के गर्भाशय में पहुंचाया जाता है। डिंब को वाय क्रोमोसोम द्वारा निषेचित करने से लड़के ही लड़के पैदा किए जा सकते हैं। ब्रह्मा ने ही पुत्र प्राप्ति तथा पति के पोषण के लिए ही नारियों की उत्पत्ति की है। (मनु 9–96 आदि 77–21 पृ. 350 फुटनोट 804) फिर भी पुरुष वर्ग इतना स्वार्थी हो गया है कि उसी के लिए ब्रह्मा द्वारा रची गई नारी को इस संसार में आने से रोक रहा है आखिर क्यों? अमेरिका के वैज्ञानिकों ने फ्लोसाइटोमैटिंक तरीके से पुरुष के एक्स क्रोमोसोम और वाई क्रोमोसोम वाली वीर्य कोशिकाओं को अलग करने की विधि ढूंढ़ ली है। लड़के की चाहत रखने वाले वाई क्रोमोसोम के बाहुल्य वाले वीर्य से स्त्री के डिंब को फर्टिलाइज करने से लड़का होगा। अब यह तकनीक

भारत में भी आ चुकी है। अब कन्याओं को गर्भ में ही नहीं आने दिया जाएगा।

पुत्र का महत्व

प्राचीन काल में छोटे-बड़े युद्ध आए दिन हुआ करते थे जिसमें शारीरिक रूप से बलशाली व्यक्ति की अत्यंत आवश्यकता होती थी, यहीं से पुत्रों की महत्ता बढ़ गई इस प्रकार पितृसत्तात्मक परिवार में पूरी सत्ता पुत्रों को दी जाने लगी एवं पुत्रियों का दान कर दिया जाने लगा जो आगे चलकर कन्यादान प्रथा के रूप में आज भी विद्यमान है। आज जो महिलाओं की स्थिति है वो सब ब्राह्मण काल की देन है। ब्राह्मण काल में ब्राह्मणों का प्रभुत्व बढ़ जाने से कई आडंबरों एवं कुप्रथाओं का जन्म हुआ। उपनयन के अभाव, कम उम्र में कन्यादान की प्रथा का चलन, लड़की को पराई अमानत मानना, अंतिम संस्कार से लेकर श्राद्ध या पिंडदान के दान, पैतृक संपत्ति, परिवार का नाम, व्यवसाय आदि में लड़कों को विशेषाधिकार दिया जाने लगा एवं वंश चलाने के लिए पुत्र प्राप्ति की लालसा आदि कुप्रथाओं ने आज सामाजिक-सांस्कृतिक मान्यताओं का रूप धारण कर लिया जिनकी जड़ें गहराई तक जा चुकी हैं इसका उदाहरण देते हुए मनीष झा कहते हैं कि कनाडा में जब मेरी फिल्म दिखाई जा रही थी तो मैं वहां 30 साल से बसे भारतीय जोड़े से मिला। उस जोड़े ने मुझे बताया कि वे किस तरह भ्रूण की जांच कराने अमेरिका गए क्योंकि कनाडा में यह गैर कानूनी है। (सहारा समय– 23 जुलाई 2005) विदेश की प्रोग्रेसिव सोसायटी में रहने के बावजूद भी भारतीय मानस की सोच नहीं बदली। यही कारण है कि जनसंख्या तो बढ़ रही है परंतु लिंगानुपात में संतुलन नहीं बन पा रहा है इस प्रकार सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर महिलाओं के साथ किए जाने वाले भेदभाव एवं उत्पीड़ित करने का अधिकार पुरुषों ने सदियों से अपने पास रखा और इसका इस्तेमाल जब जैसी जरुरत पड़ी किया।

जनसंख्या वृद्धि जैसे मसले पर काम करने वाली गैर सरकारी संस्था पापुलेशन फर्स्ट के अनुसार भ्रूण परीक्षण और भ्रूण हत्या ही लिंगानुपात में अंतर का मुख्य कारण है और क्यों न हो जब लिंग अनुपात में अंतर को दूर करने वाला कानून बनाने वाले राज्य की राजधानी में लगभग 25 हजार गर्भपात केंद्र चल रहे हैं जो सरकारी अस्पतालों की तुलना में 7.5 गुना अधिक मंहगे भी हैं। (सहारा समय– 11 जून 2005, पृ. 33) अतएव इस समस्या का निदान अभी नहीं ढूढ़ा गया तो महिलाओं की कम होती संख्या का प्रभाव अत्यंत गंभीर रूप में सामने आ सकता है।

प्रभाव :

महिलाओं के बार-बार गर्भपात से गर्भधारण की आवृत्ति बढ़ जाती है और अंततः वह रक्ताल्पता से पीड़ित हो जाती हैं इसलिए हमारे देश में 70% गर्भवती माताएं खून की कमी और कुपोषण की शिकार हैं। गर्भवस्था और प्रसव संबंधी जटिलताओं के कारण हमारे देश में हर वर्ष एक लाख पच्चीस हजार माताओं की मृत्यु प्रसव से जुड़े कारणों से हो रही है।

समाज में महिलाओं की संख्या घटने से महिलाओं के प्रति हिंसा, बलात्कार, अपहरण, बाल यौन शोषण एवं वेश्यावृत्ति बढ़ेगी। जिससे महिलाएं घरों में कैद हो जाएंगी एवं फिर से पर्दा प्रथा, बाल विवाह, सती-प्रथा आदि कुप्रथाएं महिलाओं को घेर लेंगी। आज की स्थिति में ही राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो और गृह मंत्रालय द्वारा जारी रिपोर्ट के अनुसार भारत में सन् 2000 में 16,469 बलात्कार के मामले दर्ज हुए। इस प्रकार 1995 और 2000 के मध्य 19.74 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।[25] राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षणों से पता चला है कि भारत में 24 लाख वेश्याएं हैं जिसमें 75 प्रतिशत नाबालिग हैं।[26] इस प्रकार महिलाओं की संख्या घटती गई तो एक दिन ऐसा

आएगा जब महिलाएं दुर्लभ प्राणी बन जाएगी।

प्रयास :

देश में अल्ट्रासाउन्ड मशीनें 1980 के दशक में आई थीं तब कोई कानून नहीं था लेकिन 1988 में महाराष्ट्र सरकार ने रोकथाम लगाने के लिए कानून बनाया। एबार्शन एम. टी. पी. एक्ट यानि मेडिकल टरमिनेशन आफ प्रेगनेन्सी के तहत किया जाता है। इसमें 6 कारणों से एबार्शन की अनुमति दी जाती है :- - (1) जब गर्भवती महिला की जान को खतरा हो। (2) गर्भवती महिला के शारीरिक स्वास्थ्य की क्षति हो। (3) गर्भवती महिला के मानसिक स्वास्थ्य को खतरा हो। (4) बलात्कार से गर्भ ठहरा हो। (5) बच्चे के विकलांग पैदा होने का खतरा हो। (6) गर्भनिरोधक साधन फेल हो गया हो। इस प्रकार केंद्र सरकार को भी इस समस्या का आभास हुआ और 1994 में प्री नेटल डायग्नोस्टिक टेक्नीक एक्ट बना जो 1996 में लागू हुआ। 2002 में भी संशोधन किया गया तथा इसे प्री कंसेप्शन और प्री नेटल डायग्नोस्टिक टेक्नीक एक्ट बना। इसमें तीन नए प्रावधान किए गए। एक लिंग चयन में पहली बार दोषी पाए जाने पर तीन साल की सजा और 50 हजार जुर्माना, दूसरी बार दोषी पाए जाने पर पांच साल की सजा और एक लाख रुपये जुर्माना और यदि कोई डाक्टर तीसरी बार पकड़ा जाए तो चिकित्सा डिग्री जब्त कर लेने की व्यवस्था। सभी अल्ट्रासाउन्ड क्लीनिकों का पंजीकरण अनिवार्य किया एवं उन पर निगरानी का प्रावधान किया गया (सहारा समय)। इतने सख्त प्रावधानों के बावजूद प्रदेश में भ्रूण परीक्षण धड़ल्ले से जारी हैं। अतएव बीबीसी के अनुसार एक गैर सरकारी अंतराष्ट्रीय संगठन प्लान ने भारत सरकार के साथ मिलकर सोप ओपेरा 'आत्मजा' के माध्यम से जागरूकता का बीड़ा उठाया है। संगठन का मानना है कि सरकार द्वारा चेतावनी भरे विज्ञापनों की जगह यदि मनोरंजक ढंग से लोगों को समझाने की कोशिश की जाए तो ज्यादा सकारात्मक असर होगा (सहारा समय– 26 फरवरी 2005 पृ. 27)।

बालिका भ्रूण हत्या रोकने के लिए केंद्र और राज्य सरकारें मिलकर नई योजना की मुहिम चलाएंगी जिसके तहत बालिका के जन्म से व्यस्क होने तक का सारा खर्च सरकार उठायेगी। इस योजना पर खर्च होने वाली राशि में से 70 फीसदी केंद्र और 30 फीसदी राज्य सरकार देगी। मोटे तौर पर उसके लालन-पालन, पूरी शिक्षा, चिकित्सा, किताबों, स्कूल कालेज की फीस आदि खर्च राज्य सरकार उठाएगी (दै. भा., 10 अगस्त 2005)।

निष्कर्ष :

स्त्री/पुरुष के लिंगानुपात में महिलाओं की अल्पता का राज्य, धर्म, जनसंख्या वृद्धि दर, जनसंख्या, साक्षरता एवं ग्रामीण/शहरी इलाकों के हिसाब से आंकड़ों का विश्लेषण करने से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि पूरे विश्व में लिंग-अनुपात में महिलाओं की कम होती संख्या की सूची में भारत का स्थान ऊपर है। भारत में केंद्र शासित प्रदेश में जो दो स्टेट की राजधानी एवं सिविल इंजीनियरिंग का उत्कृष्ट नमूना चंडीगढ़ में सबसे कम प्रति 1000 पुरुष पर 773 महिलाओं का अनुपात पाया गया है। द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर पंजाब एवं हरियाणा जैसे समृद्धशाली राज्यों में तो महिलाओं का अनुपात 1000 : 793, 1000 : 820 पाया गया जो कि राष्ट्रीय स्तर से भी कम है। इसी शिशु लिंग अनुपात में कन्याओं का सबसे कम आंकड़ा पंजाब 1000 : 793, हरियाणा 1000 : 820 एवं चंडीगढ़ 1000 : 845 में पाया गया। भारत में पंजाब का सबसे छोटा जिला फतेहगढ़ साहिब में सबसे कम 1000 : 754 महिलाएं हैं। दस लाख से ज्यादा आबादी वाले शहरों में लिंग-अनुपात की असमानताओं का विश्लेषण करें तो सूरत, राजकोट, कानपुर, अमृतसर एवं बड़ोदरा में पिछले एक दशक में

एक हजार बालकों पर बालिकाओं की संख्या में 80 से अधिक की कमी आई है। गांवों और शहरों के अनुपात को अलग-अलग करके देखें तो शहरों में लड़कियां कम होती जा रही हैं जो देहाती इलाके शहरों से जुड़े हैं या जहां शहरीकरण बढ़ा है वहां लड़कियों की संख्या कम हो रही है। धर्म के अनुसार स्त्री/पुरुष का लिंग-अनुपात देखे तो सबसे ज्यादा कमी 1000 : 893 सिखों में आई है द्वितीय स्थान पर हिंदू 1000 : 931 भी शामिल है। वहीं सामान्य स्त्री-पुरुष के अनुपात में ईसाई (1009) सबसे आगे हैं। ईसाइयों के बाद बौद्ध 1000 : 953, जैन 1000 : 940 एवं मुसलमान 1000 : 936 में ही पुरुषों के मुकाबले महिलाओं का अनुपात तेजी से नहीं घट रहा है। जबकि साक्षरता के मामले में सबसे अच्छा प्रदर्शन जैनियों का तथा खराब मुस्लिमों का रहा है।

लेखिका ने अपने वैवाहिक संबंधों में हिंसा के अध्ययन में पाया था कि शैक्षिक तथा आर्थिक मजबूती जिन परिवारों में थी उनमें शारीरिक हिंसा कम पाई गई, किंतु उपरोक्त अध्ययन से ज्ञात होता है कि घनी आबादी वाले समृद्धशाली शहरों में जहां शैक्षिक एवं आर्थिक स्थिति श्रेष्ठ है वहां पर स्त्री-पुरुष के लिंग-अनुपात में महिलाओं की संख्या तेजी से घटी है। धर्म के अनुसार अल्पसंख्यकों की बात कही जाए वहां पर लिंग अनुपात की स्थिति दयनीय नहीं है यद्यपि मुसलमानों में शिक्षा तथा आर्थिक आभाव है वहीं जैन, ईसाई, बौद्ध शिक्षित समुदाय में आते हैं। यह उल्लेखनीय होगा कि अल्पसंख्यकों में जनसंख्या वृद्धि दर अधिक है और इन्हीं में लिंग अनुपात की स्थिति दयनीय नहीं है और यह भी कि ईसाइयों में शिक्षा की अच्छी स्थिति एवं जनसंख्या वृद्धि दर कम होते हुए भी लिंग-अनुपात में संतुलन है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि विकसित समृद्धशाली राज्यों एवं सिख तथा हिंदू धर्म में स्त्री/पुरुष के लिंग-अनुपात में महिलाओं की संख्या कम होना वही पर अल्पसंख्यकों में स्त्री/पुरुष के लिंग-अनुपातों में लगभग सामंजस्य रहना सिद्ध करता है कि लिंग अनुपात धर्म विशेष का प्रत्यय ज्यादा है तथा यह शोध का विषय हो सकता है धर्म विशेष के अंतर्गत शिक्षा तथा आर्थिक आधार पर लिंगानुपात की स्थिति क्या होगी?

भारत आध्यात्मिक चेतना का देश है, हम हर विषय पर चिंतन, मनन एवं अनुशीलन को एक सांस्कृतिक पीठिका पर करते हैं। अतएव लिंग अनुपात में घटती महिलाओं पर रोक लगाने के लिए बालिका भ्रूण हत्या पर कानून द्वारा कठोर प्रतिबंध लगाने के साथ-साथ इसे सामाजिक मान्यता भी प्रदान की जाए और ये सामाजिक मान्यता समाज की स्त्रियों के प्रति सकारात्मक सोच पैदा कर रूढ़िवादी जड़ों की गहराईयों से उखाड़ फेंकने से होगा। कानून में पुरुषों और महिलाओं के लिए उत्तराधिकार के मामले में कोई भेदभाव नहीं किया गया है और माता-पिता की संपत्ति में उन्हें बराबर का अधिकार प्राप्त है इसे भी सामाजिक मान्यता दी जाए तो दहेज का प्रश्न ही नहीं उठता एवं लड़कियों को सुरक्षा भी मिलेगी जिससे जरूरत पड़ने पर मां-बाप का हक से ध्यान भी रखेगी। इस प्रकार सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक रूप से लड़का-लड़की दोनों को बराबर का हक देने के साथ-साथ महिलाओं के प्रति नकारात्मक विचारों को निकालकर उसके प्रति संवेदनशीलता, सदाचार एवं नैतिकता जैसे विचारों से मन को शुद्ध कर अपनी मानसिकता को शनैः-शनैः परिवर्तित किया जाए तो धर्म का स्वरूप आध्यात्मिक चेतना में पनपेगा, जो पूरे देश को सकारात्मक वातावरण से रोशन करेगा। जिससे स्वमेव ही समस्या का निराकरण हो सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

(1) हरिदत्त वेदालंकार "हिंदू परिवार मीमांसा" प्रकाशक सरस्वती सदन मसूरी, 1963, पृ. 109
(2) 40 ऐत. ब्रा. 7/13 (Dr. Winternity Die Frauin den Induchen Religionen P.2)
(3) सुषमा शुक्ल वैदिक वाड.यम में नारी विद्यानिधि प्रकाशन, 1996, पृ. 41।
(4) गजानन शर्मा "प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी", रचना प्रकाशन, 1971, पृ.73।
(5) तमाल पत्रिका, वर्ष – 5, अंक 1, प्रतापगढ़ (उ. प्र.) संपादक – मधुसिंह सोमवंशी।
(6) बी. एन. लूनिया, 'इवोल्यूशन आफ इंडियन कल्चर', पृ. 337।
(7) मोहम्मद जियाउल हक "बढ़ती आबादी बढ़ती त्रासदी" सहारा समय – 18, सितंबर 2004, पृ. 30।
(8) डा. तुहिन देव "लिंग भेद के अनेक चेहरे" समाज कल्याण, अप्रैल–2003, वर्ष – 48, अंक 9, पृ. 27।
(9) डा. एल. एन. मित्तल "महिलाओं के मानवाधिकार", पत्रिका नीति मार्ग, वर्ष–6, अंक– 18, 1–15 दिसंबर 2004, पृ. 47।
(10) वनिता चेतना – फरवरी 2003, पृ. 6।
(11) दैनिक भास्कर, 1 फरवरी 2005, पृ. 1।
(12) वही 10।
(13) डा. तुहिन देव, "सामाजिक सरोकार का सवाल", वनिता चेतना, फरवरी 2003।
(14) वही 8।
(15) मीता जिंदल, "किसका अस्तित्व मिटा रहे हैं" दै. भा., मधुरिमा, 21 सितंबर 2005
(16) ध्रुव तनवानी चंद्र भैरू "महिला विकास के पांच दशकों का लेखा-जोखा", पत्रिका–समाज कल्याण वर्ष -43, अंक – 8 मार्च 1998।
(17) मदन जैडा "कम होती बेटिया" सहारा समय – 23 अप्रैल 2005।
(18) डा. श्याम सुंदर सिंह चौहान "महिला मानवाधिकार और कुछ सवाल", समाज कल्याण, मार्च 1998।
(19) मदन जैडा "जन्म से क्यों लिपटी है मृत्यु" सहारा समय, 23 अप्रैल 2005, पृ.–20।
(20) चंद्रकांत मिश्र "बच्चों की जान और हजारों गर्भपात दुकान" सहारा समय, 11 जून 2005, पृ.–33।
(21) इंद्रजीत तंवर "अमीर दिल्ली का नरक" सहारा समय, 23 अप्रैल 2005।
(22) डा. रामसूरत त्रिपाठी "महिलाओं का गड़बड़ाता गणित" समाज कल्याण, 1998, पृ.–19।
(23) सुष्मिता मालवीय "बिन लड़की का एक गांव" समाज कल्याण – अगस्त2004, पृ. 29।
(24) वही 18।
(25) डा. रामसूरत त्रिपाठी "बलात्कार बनाम मृत्युदंड, समाज कल्याण", अगस्त, 2004 पृ. 14-15।
(26) रविप्रकाश यादव "बढ़ती बाल वेश्यावृत्ति की समस्या" समाज कल्याण, वर्ष 47, अंक–7 फरवरी 2002, पृ. 15--16।

❐

विभिन्न राज्यों के मंत्रियों (जेल/गृह) प्रमुख सचिवों तथा महानिदेशकों/महानिरीक्षकों (जेल) का सम्मेलन

दिनांक 25.4.2008 को डी आर डी ओ भवन, नई दिल्ली के डी आर डी ओ सभागार में गृह मंत्रालय एवं पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो द्वारा राज्यों के जेल/गृह मंत्रियों, प्रमुख सचिवों तथा महानिदेशक जेल व महानिरीक्षक जेलों तथा जेल प्रभारियों का जेल सुधार, सुधारात्मक प्रशासन, जेल नियम प्रारूप तथा कारागार आधुनिकीकरण योजना की प्रगति पर विचार विमर्श करने के लिए एक अखिल भारतीय सम्मेलन आयोजित किया गया। इसमें केंद्रीय गृह मंत्री माननीय श्री शिवराज वी पाटील ने अध्यक्षता की तथा विशिष्ट अतिथियों के रूप में केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री शकील अहमद, श्रीमति अजंता नियोग माननीय मंत्री असम राज्य, श्री रणदीप सिंह सूरजेवाला, माननीय मंत्री हरियाणा राज्य, श्री हीरा सिंह माननीय मंत्री पंजाब राज्य, केंद्रीय गृह सचिव श्री मधुकर गुप्ता, श्री के कोशी, महानिदेशक, पुलिस अनु. एवं विकास ब्यूरो, श्रीमति अनिता चौधरी अतिरिक्त सचिव गृह मंत्रालय तथा श्री एन एस कलसी संयुक्त सचिव (सी एस) गृह मंत्रालय, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, विधि मंत्रालय एवं अन्य मंत्रालयों के वरिष्ठ अधिकारियों तथा विभिन्न राज्यों के महानिदेशक/महानिरीक्षक व जेल प्रभारियों ने भाग लिया।

सम्मेलन के प्रारंभ में गृह सचिव श्री मधुकर गुप्ता ने अपने स्वागत भाषण में जेल सुधारों के महत्व पर प्रकाश डाला तथा कारागार प्रशासन के क्षेत्र में हो रही धीमी प्रगति तथा मुख्यतः न्यायालय निर्णयों पर आधारित प्रक्रिया के कारण आपराधिक न्याय प्रणाली सुधारों को समस्या ग्रस्त विषयवस्तु को अपर्याप्त माना। उन्होंने कारागार प्रशासन द्वारा कारागार से संबंधित समस्याओं के समाधान में की जा रही तदर्थ कार्य शैली पर ध्यान आकर्षित करते हुए यह उल्लेख किया उन्होंने कारागार एक राज्य विषय होने के बावजूद भारत सरकार जेलों की आधुनिकीकरण योजना का जिक्र किया जिसके अंतर्गत कारागारों के सुधारात्मक प्रनर्वसन तथा कैदियों के पुनर्वसन की आधुनिक दर्शन शैली की क्षमता व आधारभूत संरचना को ऊपर उठाने के लिए दी जा रही वित्तीय स्त्रोतों का हवाला दिया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि जेल प्रबंधन में सुधार लाने के लिए केंद्र सरकार व राज्य सरकारों का विभिन्न विभागों से सहयोग प्राप्त करना भी आवश्यक है चूंकि उनके एवं जेल विभाग के अधिकांश कार्य एक दूसरे के पूरक हैं।

जेल सुधारों पर राष्ट्रीय नीति के प्रारूप को तैयार करने के लिए गृह मंत्रालय द्वारा एक समिति महानिदेशक, पु. अनु. एवं वि. ब्यूरो की अध्यक्षता में गठित की गई जिसने परस्पर परामर्श प्रक्रिया के आधार पर एक प्रलेख तैयार कर जुलाई 2007 में गृह मंत्रालय को प्रस्तुत किया गया जिसे गृह मंत्रालय ने देश के सभी राज्यों को उनके विचारों के लिए परिचालित किया गया। इस सम्मेलन में इस पर प्रमुखता से विचार विमर्श किया जाएगा।

श्री के. कोशी महानिदेशक, पु. अनु. एवं वि. ब्यूरो द्वारा इस संबंध में विभिन्न शीर्षों के अंतर्गत कारागार सुधार की राष्ट्रीय नीति पर दी गई विभिन्न अनुशंसाओं से संबंधित एक पावर पाइंट प्रस्तुति करके इस नीति की उल्लेखनीय अनुशंसाओं से सम्मेलन को अवगत कराया।

इस अवसर पर श्री एन एस कलसी संयुक्त सचिव (सी एस) गृह मंत्रालय द्वारा भी जेलों के आधुनिकीकरण तथा

राज्यों के सहयोग पर आधारित एक पावर पाइंट प्रस्तुति के द्वारा जिसमें योजना के प्रथम भाग में की गई कार्रवाई तथा आधुनिकीकरण योजना के प्रस्तावित द्वितीय चरण में शामिल किए जाने वाले प्रस्तावों का उल्लेख किया गया तथा आगामी 5 वर्षों में द्वितीय चरण में होने वाले अनुमानित व्यय का भी उल्लेख किया। उन्होंने सभी राज्यों से योजना के भाग 2 के अंतर्गत अपने विचार व सुझाव मई 2008 तक भेजने का भी अनुरोध किया ताकि इसे यथाशीघ्र अंतिम रूप दिया जा सके।

इस अवसर पर माननीय केंद्रीय गृह राज्य मंत्री श्री शकील अहमद ने अपने उदबोधन में अपराधियों को पुनर्शिक्षित तथा कानून की अनुपालना करने वाला सभ्य समाज का एक नागरिक बनाने के कार्य को सुधारात्मक प्रशासन के लिए चुनौती का कार्य बताया। इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए उन्होंने कारागार कर्मियों/अधिकारियों को नियमित प्रशिक्षण व व्यावसायिक दक्षता की आवश्यकता पर बल दिया। इसके अतिरिक्त उन्होंने कहा कि कारागार कर्मियों को आंतरिक व विदेशी जानकारियों से अवगत कराए जाने की आवश्यकता है। उनका मत था कि कारागारों की समस्याएं विश्वभर में लगभग एक जैसी ही हैं अतः आपसी सहयोग से इस समस्या को निपटाने व संरक्षण व सुरक्षा का तालमेल कर आमजन की सुरक्षा व कैदियों के आम जन वाली स्थिति में सांमजस्य रखना होगा।

अपने उदघाटन संबोधन में माननीय गृह मंत्री जी श्री शिवराज वी पाटिल ने सुधारात्मक प्रशासन तथा कारागार सुधारों पर आयोजित राष्ट्रीय सम्मेलन के महत्व पर प्रकाश डाला।

उन्होंने राष्ट्रीय नीति के प्रारूप के प्रलेखन पर ध्यान आकर्षित करते हुए इसकी अनुसंशाओं को जो विद्यमान कानूनों के अंतर्गत कारागार आधारभूत संरचनाओं में वृद्धि करने वाले ऐसे कार्यक्रमों की आवश्यकता पर बल दिया जिसमें कैदियों के पुनवर्सन तथा पुनर्गठन तथा उनके व्यावहारिक परिवर्तन व व्यावसायिक दक्षता में वृद्धि हो उन्होंने संबंधित कार्यक्रमों की सराहना की। उन्होंने कारागारों में अपराधियों के उपचार को जो राज्य सूची 2 से स्थानांतरित कर सूची 3 (समवर्ती सूची) में करने तथा अखिल भारतीय सुधारात्मक सेवा जो अखिल भारतीय सेवा के अंतर्गत आए, एक नया केंद्रीय कारागार अधिनियम जो विद्यमान कारागार अधिनियम 1994 की जगह लें आदि पर अपने विचार रखे साथ ही उन्होंने राज्यों व केंद्र संबंधों पर आपसी सहयोग द्वारा पूर्ण करके इन अनुसंशाओं में दिए गए प्रावधानों को अपना पूर्ण समर्थन देने की बात कही। उन्होंने कैदियों के जमानत पर छोड़ने संबंधी आपराधिक दंड संहिता की धाराओं में संशोधन कर शामिल की गई नई धाराओं की जानकारी मैदानी स्तर के अधिकारियों तक ले जाने एवं इनके शीघ्र एवं सतंत्र क्रियान्वयन करने पर बल दिया ताकि इनका लाभ जेलों में रह रहे कैदियों को पात्रतानुसार मिल सके।

माननीय गृह मंत्री जी ने अपने उद्बोधन में आपराधिक दंड संहिता व आपराधिक न्याय प्रणाली के संवेदनशील प्रावधानों को पुनरावलोकन करने तथा जेलों में बढ़ती संख्या के विभिन्न कानूनों व पहलूओं पर अपने विचार रखे इसके अतिरिक्त श्री पाटिल ने आदर्श पुलिस स्टेशन, जिला पुलिस अधीक्षक कार्यालय, नियत्रंण तथा पुलिस मुख्यालयों के नए डिजायन तैयार करने व विभिन्न श्रेणियों के कैदियों के लिए आदर्श डिजायन तैयार करने की आवश्यकता पर बल दिया साथ ही यह भी अपेक्षा की कि वे डिजायन इस प्रकार के तैयार किए जाएं जो आगामी 50 वर्षों तक सुधारात्मक कार्यक्रमों को लागू करने में सहायक हों। गृह मंत्री जी द्वारा मुक्त कारागार प्रणाली की अवधारण पर भी अपने विचार व्यक्त किए उन्होंने इस प्रणाली के दर्शन के पूर्ण क्रियान्वयन को विस्तृत रूप से लागू करने के लिए राज्यों का आह्वान किया जिससे कारागार आधुनिकीकरण का सही रूप से प्रयोग किया जा सके उनका कहना था कि

कारागार सुधारों पर हम सभी का प्रमुख ध्येय होना चाहिए तथा इस पर होने वाले व्यय को पूर्ण निष्ठा व उसके महत्व के अनुसार व सही पूर्ण रूप में किया जाए ताकि कारागार सुधार जैसे अनछूए विषय को पूर्ण न्याय मिल सके।

श्रीमति अजंता नियोगी माननीय मंत्री असम सरकार ने असम की जेलों का विवरण प्रदान किया उन्होंने असम के विभिन्न कारागारों में गिरफ्तार कैदियों का श्रेणीवार विवरण दिया तथा वहां के कारागारों में अपनाए जा रहे कार्यक्रमों का ब्यौरा भी दिया इसके अतिरिक्त सरकारी व गैर सरकारी संगठनों द्वारा कारागार सुधारों पर की जा रही गतिविधियों का भी उल्लेख किया।

श्री रणदीप सिंह सूरजेवाला माननीय मंत्री हरियाणा सरकार ने कारागार सुधार पर सम्मेलन के विचार का स्वागत करते हुए गृह मंत्री जी को देश में कारागार सुधारों के लिए धन्यवाद दिया तथा देश के पूर्ण आपराधिक न्याय प्रक्रिया में जेल सुधार की प्रक्रिया बिल्कुल दबी पड़ी है। उन्होंने कारागारों की आधारभूत संरचना में सही निवेश की आवश्यकता, जेलों में अत्याधिक भीड़ पर विशेष ध्यान दिए जाने की अपेक्षा की। साथ ही उन्होंने संगठित आपराधिक संगठनों/समूहों द्वारा कारागारों में की जा रही गतिविधियों पर ध्यान दिए जाने की आवश्यकता पर बल दिया। श्री सूरजेवाला ने हरियाणा राज्य में सुधारात्मक प्रशासन तथा कारागारों पर हो रहे विभिन्न व्ययों का विवरण दिया। उन्होंने कारागारों के आधुनिकीकरण के लिए कुछ नए सुझाव भी दिए यद्यपि माननीय मंत्री ने जेल को राज्य सूची में ही रखने का समर्थन किया।

श्री हीरासिंह माननीय मंत्री पंजाब राज्य ने अपने उद्‌बोधन में प्रत्येक कारागार में कैदियों के लिए एक मानसिक चिकित्सक रखने का सुझाव दिया ताकि वह कैदियों में मनोवैज्ञानिक तरीके से सुधार ला सकें। उन्होंने कैदियों के सुधार में अध्यात्मिक उपायों के महत्व की ओर ध्यानाकर्षित करते हुए ऐसे सभी कार्यक्रम भी जेलों में नियमित रूप से शामिल किए जाए क्योंकि हमारे देश में आमजन को सामाजिक एवं व्यक्तिगत आचरण अभी भी धार्मिक आत्माओं से प्रभावित रहता है। इसके पश्चात पंजाब सरकार द्वारा कारागारों में विभिन्न प्रकार की श्रेणियों के बारे में बताया उनका मत था कि परीक्षणाधीन कैदियों व सजा प्राप्त कैदियों से अलग रखा जाए। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि पंजाब एक सीमाप्रांत प्रदेश है अतः वहां के लिए एक विशेष पैकेज भारत सरकार द्वारा दिया जाना चाहिए उन्होंने पाकिस्तानी कैदियों के होने व वहां संवेदनशीलता के बारे में भी चर्चा की। राष्ट्रीय नीति के प्रारूप प्रलेखन पर अपने विचार रखे तथा अपेक्षा कि इसके दीर्घावधि प्रयोग के लिए कुछ अनुसंशाओं पर और अधिक परीक्षण की आवश्यकता है। भारत सरकार द्वारा योजना के द्वितीय चरण में पंजाब के कारागारों के लिए विभिन्न आधुनिक यंत्रों के प्रयोग का प्रस्ताव भी किया। इसके पश्चात् उन्होंने पंजाब न्यायिक अधिकारियों की कमी का उल्लेख किया जिसके कारण परीक्षणाधीन कैदियों की संख्या अधिक होने व लंबित मामलों की अधिक संख्या व भीड़ का जिक्र किया। उन्होंने यह भी विचार व्यक्त किया कि जेल सुधारों के तारतम्य में हमें अपने समग्र सामाजिक परिवेश को भी सुधारना होगा ताकि सामान्य नागरिक के अपराधी बनने की सम्भावनाओं को ही यथाशीघ्र एवं यथासम्भव समाप्त किया जा सके।

अगला सत्र तकनीकी सत्र के रूप में प्रारंभ हुआ जिसमें देश के विभिन्न भागों से आए जेलों के महानिदेशकों/महानिरीक्षकों तथा प्रभारियों द्वारा तकनीकी पहलूओं पर विस्तृत विचार विमर्श व सुझावों का आदान प्रदान किया गया।

श्रीमति अनिता चौधरी अतिरिक्त सचिव गृह मंत्रालय ने दिनभर के विचार विमर्श में आए सुझावों को चिन्हित करते हुए ऐसे महत्वपूर्ण उपायों को रेखांकित किया जिन पर प्राथमिकता के आधार पर समयबद्ध कार्रवाई की

आवश्यकता है। गृह मंत्रालय की भूमिका को जेल सुधारों एवं आधुनिकीकरण की योजनाओं को प्रभावी बनाने के लिए उनके शीघ्र क्रियान्वन हेतु राज्यों से सक्रिय सहयोग प्रदान करने का अनुरोध किया।

देश के विभिन्न भागों में जेल विभाग द्वारा जेल प्रशासन एवं सुधारों को लागु करने के जो सफल अभिनव उपाय किए हैं उनको संकलित एवं संपादित कर एक त्रैमासिक समाचार पत्र के रूप में प्रकाशित करने के श्रीमति अनिता चौधरी अतिरिक्त सचिव गृह मंत्रालय के सुझाव का महानिदेशक पुलिस अनु. एवं विकास ब्यूरो द्वारा अनुमोदन किया गया तथा ब्यूरो में इस विषय पर शीघ्र कार्रवाई का आश्वासन दिया। उन्होंने सम्मेलन में भाग लेने आए कारागार विभाग के सभी अधिकारियों को इस हेतु लेख ब्यूरो के कारागार संभाग को नियमित रूप से भेजने का अनुरोध किया।

अंत में उन्होंने गृह मंत्रालय के वरिष्ठ अधिकारियों व ब्यूरो के महानिदेशक व अन्य वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा सम्मेलन में भाग लेने वालों को धन्यवाद देते हुए सम्मेलन का समापन किया।

—रमेश चंद्र अरोड़ा

❐❐❐

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
गृह मंत्रालय
पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना

पुलिस, कारागार एवं न्यायालयिक विज्ञान से संबंधित विषयों पर हिन्दी में पुस्तक लेखन के लिए रचनाएं दिनांक 30.9.08 तक आमंत्रित की जा रही हैं। मूल प्रकाशित पुस्तकों पर 5 पुरस्कार 30,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है), दो पुरस्कार अनूदित मुद्रित पुस्तकों के लिए 14,000/- रु. प्रति पुरस्कार (एक पुरस्कार महिलाओं के लिए आरक्षित है)। योजना के भाग दो में 40,000/- रु. के दो पुरस्कार हैं। जिसके लिए इस वर्ष के विषयों पर रूपरेखाएं आमंत्रित हैं। जिसमें सामान्य वर्ग के लिए **वैध समस्याओं के निदान हेतु हिंसा की बढ़ती प्रवृति** तथा महिलाओं के लिए आरक्षित विषय **व्यावसायिक यौन कर्मियों का सुधार एवं पुनर्वसन** है। विस्तृत जानकारी के लिए कृपया संपादक (हिंदी), पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो (गृह मंत्रालय), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क करें।

(दूरभाष : 011-24362418, 24360371 एक्स-253 तथा फैक्स : 011-24362425)

अपराध विज्ञान तथा पुलिस विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु अध्येतावृति योजना

पुलिस विज्ञान तथा अपराध विज्ञान में डाक्टरेट कार्य हेतु ब्यूरो द्वारा 6 अध्येतावृतियों के लिए भारतीय नागरिकों से आवेदन पत्र आमंत्रित किए जाते हैं। इस योजना के तहत विज्ञापन प्रति वर्ष मई माह में भारत के सभी प्रमुख समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाता है। इसके लिए अंतिम तिथि 30 जून होती है। इसमें अभ्यर्थी को पी.एच-डी. के लिए विश्वविद्यालय से पंजीकृत होना आवश्यक है। इसमें अभ्यर्थी को पहले 2 वर्ष 8000/- रु. तथा तीसरे वर्ष 9000/- रु. तथा इसके साथ फुटकर खर्च के लिए 10000/- रु. तथा जिस संस्था से वह पंजीकृत होगा उसे 3000/- रु. प्रदान किए जाएंगे। विस्तृत जानकारी के लिए अनुसंधान एकक, पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 से संपर्क किया जा सकता है। पूर्ण जानकारी कार्यालय की वेब साइट www.bprd.gov.in में भी देखी जा सकती है। (संपर्क के लिए फोन नं. 01124360371/243)

पुलिस एवं कारागार संबंधी विषयों पर अनुसंधान परियोजनाएं आमंत्रित

पु.अनु.वि. ब्यूरो (गृह मंत्रालय) **पुलिस एवं कारागार** से संबंधित विभिन्न विषयों की 10 अनुसंधान परियोजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए गैर सरकारी संगठनों, विश्वविद्यालयों व व्यक्तिगत शोधकर्ताओं को उनके संबंधित विश्वविद्यालयों के माध्यम से आवेदन आमंत्रित कर रहा है। आवेदन भेजने की अंतिम तिथि 30 सितंबर, 2008 है। विस्तृत जानकारी के लिए उपनिदेशक (अनु.) एवं सहायक निदेशक (सी.सी.), ब्लाक सं. 11, 3/4 मंजिल, सीजीओ कंप्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 (फोन नं. 01124362418 एवं 01124263872) पर संपर्क कर सकते हैं। तथा ब्यूरो की www.bprd.gov.in वेब साइट से भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

लेखकों से निवेदन

यदि पुलिस विज्ञान में प्रकाशन के लिए आपके पास पुलिस, शांति-व्यवस्था, अपराध न्याय-व्यवस्था आदि पर कोई लेख है या आप लेख लिखने में सक्षम हैं तथा रुचि रखते हों तो अपने लेख यथा शीघ्र भेजें। अच्छे लेखों को प्रकाशित करने का हमारा पूरा प्रयास रहेगा। लेख टाइप किया होना चाहिए तथा इसके संबंध में फोटो, चार्ट आदि हों तो उन्हें भी साथ भेजना चाहिए। प्रकाशित होने वाले लेखों पर समुचित पारिश्रमिक की व्यवस्था है।

यदि आपने पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी विषय पर उपयोगी पुस्तक लिखी है और आप पुलिस विज्ञान में उसे कड़ी के रूप में प्रकाशित करवाना चाहते हैं तो हमें पांडुलिपि भेजें।

यदि आप कर्मियों के कार्य को लेकर कहानी या अन्य किसी विधा में लिखने में रुचि रखते हों तो हम ऐसे साहित्य का भी स्वागत करेंगे।

यदि पुलिस विज्ञान से संबंधित किसी हिन्दीतर भाषा के उच्चस्तरीय लेख का अनुवाद किया हो और आपके पास अनुवाद प्रकाशन का कापीराइट हो अथवा उनके कापीराइट की आवश्यकता न हो तो ऐसे लेख/सामग्री भी प्रकाशनार्थ आमंत्रित हैं। प्रकाशित लेखों पर समुचित मानदेय देने की व्यवस्था है। लेख भेजते समय यह प्रमाणित करें कि लेख मौलिक/अनूदित व अप्रकाशित है तथा इस पर कोई मानदेय नहीं लिया गया है। अनूदित लेख के कापीराइट के संबंध में भी सूचित करें।

विषय आदि के बारे में विस्तृत जानकारी के लिए पुलिस विज्ञान की नमूने की प्रति मंगाने के लिए संपर्क करें :--

संपादक
पुलिस विज्ञान
पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, चौथी मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003
फोन : 24360371 एक्स. 253

वैब साइट — डब्लू डब्लू डब्लू.बीपीआरडी.जीओवी.इन
डब्लू डब्लू डब्लू. बीपीआरडी.एनआईसी.इन

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, ब्लाक नं. 11, 3/4 मंजिल, सी.जी.ओ. कम्प्लैक्स, लोदी रोड, नई दिल्ली-110003 द्वारा प्रकाशित तथा प्रबंधक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद, (हरियाणा) द्वारा मुद्रित।

पुलिस विज्ञान

(त्रैमासिक पत्रिका)
जुलाई-सितंबर, 2008

सलाहकार समिति

के. कोशी
महानिदेशक

रमेशचंद्र अरोड़ा
निदेशक (अनु. एवं वि.)

डा. बद्री विशाल त्रिवेदी
उप निदेशक

संपादक : **दिवाकर शर्मा**

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो
ब्लाक-11, 3 एवं 4 मंजिल
सी.जी.ओ. कम्पलैक्स, लोदी रोड
नई दिल्ली-110003

वर्ष - 25 अंक 104 जुलाई-सितंबर, 2008

वर्ष - 25 अंक 104 जुलाई-सितंबर, 2008

पं. गोविन्द वल्लभ पंत पुरस्कार योजना के अंतर्गत ब्यूरो द्वारा प्रकाशित पुस्तकें

क्र. सं.	*पुस्तक का नाम*	*लेखक का नाम*	*मूल्य*
1.	**भारतीय पुलिस का इतिहास** (अतीत काल से मुगल काल तक)	डा. शैलेन्द्र चतुर्वेदी	54/-
2.	**भारत में केन्द्रीय पुलिस संगठन**	श्री एच. भीष्मपाल	65/-
3.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री रामलाल विवेक	65/-
4.	**ग्रामीण पुलिस : समस्याएं एवं समाधान**	श्री शंकर सरौलिया	70/-
5.	**विकासशील समाज में समसामयिक पुलिस की भूमिका**	श्री आर.एस. श्रीवास्तव	105/-
6.	**स्वातंत्र्योत्तर भारत में पुलिस की भूमिका एवं जनता का दायित्व**	डा. कृष्णमोहन माथुर	210/-
7.	**मादक पदार्थ एवं पुलिस की भूमिका**	श्री हरीश नवल	—
8.	**सामाजिक चेतना के परिप्रेक्ष्य में पुलिस की भूमिका का उद्‌भव**	प्रो. मीनाक्षी स्वामी	—
9.	**समग्र न्याय-व्यवस्था में पुलिस का स्थान एवं भूमिका**	श्री ललितेश्वर	600/-
10.	**पुलिस दायित्व एवं नागरिक जागरूकता**	डा. सी. अशोकवर्धन	568/-
11.	**महिला और पुलिस**	श्रीमती अमिता जोशी	100/-
12.	**मानवाधिकार और पुलिस**	डा. जी.एस. वाजपेयी	346/-
13.	**नई आर्थिक नीति एवं अपराध**	डा. अर्चना त्रिपाठी	183/-
14.	**बाल अपराध**	डा. गिरिश्वर मिश्र	225/-
15.	**न्यायालयिक विज्ञान की नई चुनौतियां**	डा. शरद सिंह	200/-
16.	**मानवाधिकार संरक्षण एवं पुलिस**	श्री रामकृष्ण दत्त शर्मा एवं डा. सविता शर्मा	510/-
17.	**सामुदायिक पुलिस व्यवस्था**	डा. तपन चक्रवर्ती डा. रवि अम्बष्ट	205/-
18.	**संगठित अपराध**	श्री महेन्द्र सिंह आदिल	313/-
19.	**पुलिस कार्यों का निजीकरण**	डा. शंकर सरौलिया	330/-
20.	**साइबर क्राइम**	डा. अनुपम शर्मा	450/-

ब्यूरो द्वारा प्रकाशित उपरोक्त सभी पुस्तकें, नियंत्रक, प्रकाशन विभाग, सिविल लाइंस, दिल्ली-110054 से प्राप्त की जा सकती हैं।